Con. 3. IX.36.49
320

अंक 9
संख्या 36

शुक्रवार,
16 सितम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा—*(जारी)*
[अनुच्छेद 15-क, 209-क से ङ तथा 303 पर विचार] 2417–2503

भारतीय संविधान सभा

बुधवार, 16 सितम्बर सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः नौ बजे, अध्यक्ष महोदय, माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा—*(जारी)*

नवीन अनुच्छेद 15-क—*जारी*

(श्री जसपतराय कपूर अपनी जगह पर उठे)

***अध्यक्षः** क्या आप कुछ कहना चाहते हैं?

***श्री जसपतराय कपूर** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं अनुच्छेद 15-क पर बोलना चाहता हूं।

***अध्यक्षः** जी हां, हम अनुच्छेद 15-क पर बहस जारी रखेंगे। श्री जसपत राय कपूर!

श्री रामसहाय (मध्य भारत): मैं पूछना चाहता हूं कि क्या आप असेम्बली का, आगे का प्रोग्राम बता सकते हैं? आप अगर यह पहले वक्त ही अनाउंस कर देते तो ज्यादा अच्छा था। कल आपने आज बताने को फरमाया था।

अध्यक्षः पहले वक्त इसको बताने में जरा दिक्कत है।

मैं सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे बहस को न बढ़ायें क्योंकि आखिर वह एक ऐसे विषय के संबंध में है जिस पर पिछले सत्र में विस्तृत रूप से विचार-विमर्श हो चुका है। यदि सम्भव हो तो हम इसे आज या कल तक समाप्त कर देना चाहते हैं। यदि इस पर विचार-विमर्श करके इसे कल तक समाप्त कर दिया जाये तो बाद में कुछ अन्य विषय, अर्थात् प्रस्तावना और पहला अनुच्छेद उठाया जा सकता है।

श्री टी.टी. कृष्णमाचारी (मद्रास : जनरल): प्रस्तावना अभी नहीं उठाई जा सकेगी। वह अन्त में उठाई जायेगी।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***अध्यक्ष:** अच्छी बात है। हम पहले अनुच्छेद पर विचार करेंगे और हमें विधेयक पर भी विचार करना होगा। सभा को अब यह विदित हो गया होगा कि आज और कल तक उसे कितना कार्य करना है। यदि इस पर विचार किया गया तो मुझे आशा है कि माननीय सदस्य इस बहस को जहां तक सम्भव होगा सीमित करेंगे जिससे हम कल तक बहस समाप्त करके सत्र को भी समाप्त कर देंगे।

***श्री जसपतराय कपूर:** श्रीमान्, मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं आपकी इच्छा पूरी करने के लिये यथाशक्ति प्रयास करूंगा। वास्तव में अनुच्छेद 15-क की चर्चा से कुछ भी प्रसन्नता नहीं होती। यह सारा अनुच्छेद कर्णकटु है और सच पूछिये तो मूलाधिकार विषयक अध्याय में जिस कट्टरपंथी का अनुसरण किया गया है उसका एक उदाहरण यह अनुच्छेद भी है। इस अध्याय को "मूलाधिकारों पर परिसीमन" शीर्षक के अधीन रखना अधिक उपयुक्त होगा अथवा "मूलाधिकार" शब्द के पश्चात् "तथा उन पर परिसीमन" शब्द रखे जा सकते हैं। इसका कारण यह है कि इस अध्याय में स्वतंत्रता के अधिकारों पर उतना जोर नहीं दिया गया है जितना निर्बन्धनों तथा परिसीमनों पर।

मैं केवल चार या पांच बातों की चर्चा करूंगा। पहली बात यह है कि केवल दो वर्गों के लोग बन्दी किये जा सकते हैं: (1) वे लोग जो किसी स्पष्ट दोषारोप के आधार पर बन्दी किये गये हों, और (2) वे लोग जो किसी स्पष्ट दोषारोप के आधार पर हवालात में निरुद्ध न किये गये हों बल्कि जिन्हें राज्य के हित में निरुद्ध करना आवश्यक हो। पहले वर्ग के लोगों को कोई नये अधिकार नहीं दिये जा रहे हैं। अनुच्छेद में कहा गया है कि किसी व्यक्ति को बिना दंडाधिकारी के प्राधिकार के बन्दी नहीं किया जायेगा। किन्तु अपराध प्रक्रिया संहिता के अधीन प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार प्राप्त है। यह कहा जा सकता है कि इस संहिता को संसद अथवा प्रान्तीय विधान-मंडल भी बदल सकते हैं। किन्तु हम पूर्ववत् विधान-मंडलों का विश्वास कर सकते हैं और यह समझ सकते हैं कि वे किसी स्पष्ट दोषारोप के आधार पर भी, बिना किसी दंडाधिकारी के प्राधिकार के, किसी व्यक्ति को चौबीस घंटे से अधिक निरुद्ध करने के संबंध में उपबन्ध नहीं रखेंगे। इसलिये इस स्थल पर जो अधिकार प्रदान किया जा रहा है वह नागरिकों को पहले से ही प्राप्त है। यह भी उपबन्धित किया गया है कि 24 घंटे की कालावधि में वह व्यक्ति दंडाधिकारी के समक्ष पेश किया जायेगा। अपराध प्रक्रिया संहिता में यह उपबन्ध भी है। इसलिये इस अनुच्छेद द्वारा कोई नवीन अधिकार नहीं प्रदान किया जा रहा है और न इसके द्वारा किसी ऐसी बात की प्रत्याभूति दी जा रही है जिसके संबंध में कोई विधानमंडल उपबंध नहीं रखेगा।

जहां तक दूसरे वर्ग के लोगों का संबंध है, अर्थात् जिन लोगों को सुरक्षा के लिये हवालात में निरुद्ध किया जायेगा, उन्हें भी इस अनुच्छेद द्वारा कोई ऐसे अधिकार नहीं दिये जा रहे हैं जिनकी गिनती की जा सकती है। खण्ड 3 (ख) में यह उपबन्धित है कि "इस अनुच्छेद में की कोई बात जो व्यक्ति निवारक निरोध उपबंधित करने वाली किसी विधि के अधीन बन्दी या निरुद्ध किया गया है उसको

लागू न होगी।" इसका अर्थ यह है कि निरुद्ध व्यक्ति को बिना दंडाधिकारी के प्राधिकार के 24 घंटे से अधिक कालावधि तक निरुद्ध न रखने के प्रारम्भिक अधिकार से वंचित किया जा रहा है। निरुद्ध रखने से संबंधित विधि के कुछ उपबन्धों के अधीन रहते हुए वह किसी भी कालावधि के लिये निरुद्ध रखा जा सकता है। किन्तु यह दूसरी बात है। यह कहा जा सकता है कि किसी भी निवारक विधि में बिना दंडाधिकारी के प्राधिकार के किसी व्यक्ति को बन्दी अथवा निरुद्ध करने के संबंध में उपबन्ध नहीं रखे जायेंगे। इसका अर्थ यह है कि आप विधान-मंडल की सद्भावना का विश्वास कर रहे हैं। इस दशा में मूलाधिकारों के अध्याय में किसी बात की प्रत्याभूति देने की कोई आवश्यकता नहीं है। इस अध्याय में हमें कुछ परमावश्यक मूलाधिकारों के संबंध में उपबंध रखने चाहियें चाहे विधान मंडल युक्तियुक्त ढंग से कार्य करे या न करे। इसलिये बिना दंडाधिकारी के प्राधिकार के निरुद्ध न किये जाने का अधिकार उस व्यक्ति को नहीं दिया जा रहा है जो सुरक्षा के प्रयोजनों के लिये विरुद्ध किया जायेगा।

इसके अतिरिक्त कोई निरुद्ध व्यक्ति कितने ही समय के लिये निरुद्ध रखा जा सकता है। किन्तु यदि वह तीन मास से अधिक काल तक निरुद्ध रखा जाये तो एक मंत्रणा मंडली से परामर्श करना आवश्यक होगा। इसमें भी हम देखते हैं कि मंडली को उसके मामले पर विचार करने के पश्चात् भी वह किसी भी समय के लिये निरुद्ध रखा जा सकता है। मेरे विचार से यह बहुत ही अनुचित है। मेरे विचार से हमें इस आशय का उपबन्ध रखना चाहिये कि ऐसे मामलों पर समय-समय पर विचार किया जायेगा। मैंने इस आशय के एक संशोधन की सूचना दी थी। किन्तु जिस समय उसे उपस्थित करना था उस समय दुर्भाग्य से मैं सभा में नहीं आ सका। यदि डॉ. अम्बेडकर इसकी आवश्यकता देखें तो वे इस स्थल पर इस आशय का एक उपबन्ध रख सकते हैं। मेरा यह सुझाव है कि ऐसे मामले पर तीन-तीन मास में अथवा इससे अधिक समय में विचार किया जाये ताकि निरुद्ध व्यक्ति को इसका संतोष रहे कि उसके मामले पर समय-समय पर विचार किया जा रहा है। अन्यथा इसका अर्थ यह होगा कि यदि उसके तीन मास निरुद्ध रहने के पश्चात् मंत्रणा मंडली का यह विचार हो कि उसे निरुद्ध ही रखा जाये तो उसके मामले पर फिर विचार ही नहीं किया जायेगा और उसे कई वर्षों तक केवल कार्यपालिका की ही दया का आसरा रहेगा।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार : जनरल): क्या वह कितने ही वर्षों तक निरुद्ध रखा जा सकेगा अथवा क्या संसद अधिकतम कालावधि निर्धारित करेगी?

***श्री जसपतराय कपूर:** संसद के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह अधिकतम कालावधि निर्धारित करे। खण्ड (4) में कहा गया है कि यदि संसद चाहे तो वह इस प्रकार की विधि बना सकती है किन्तु उस पर इस बात का कोई आभार नहीं है। इसके अतिरिक्त खण्ड (4) के अधीन संसद द्वारा निर्मित विधि के अधीन निरुद्ध किसी व्यक्ति के मामले पर मंत्रणा-मंडली खण्ड (3) के परन्तुक (ख) के अनुसार विचार नहीं करेगी।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** यदि संसद कोई विधि बनायेगी तो वह अधिकतम कालावधि भी निर्धारित करेगी।

***श्री जसपतराय कपूर:** जी हां, किन्तु क्या संसद पर इस प्रकार की विधि बनाने का आभार है? यदि वह कोई विधि भी बनाये तो यह कहां निर्धारित है कि अधिकतम कालावधि निश्चित की जाये, और यदि वह निश्चित की भी गई तो क्या इस अनुच्छेद में किसी कालावधि का सुझाव रखा गया है? क्या इस सभा को संसद के पथ प्रदर्शन के लिये यह सुझाव नहीं रखना चाहिये कि अमुक अमुक कालावधि निरोध की अधिकतम कालावधि होगी और इस संबंध में संसद जो विधि बनाये उसमें इसे निर्धारित करना चाहिये? आप फिर संसद की सद्भावना का विश्वास करके इस विषय को उसके निर्णय के लिये छोड़ रहे हैं। यदि यही बात है तो इस अनुच्छेद 15-क को अकारण रखकर आप यह क्यों प्रदर्शित करना चाहते हैं कि आप कुछ मूलाधिकार प्रदान कर रहे हैं, क्योंकि वास्तव में आप इस संबंध में सुझाव रख रहे हैं कि विधान मंडल को वैयक्तिक स्वातन्त्र्य को परिसीमित करने की कहां तक स्वतंत्रता है? जहां तक निरुद्ध व्यक्तियों का संबंध है, उनकी इस अध्याय में किसी प्रकार की रक्षा नहीं की गई है। मेरा निवेदन है कि यह एक बहुत बड़ी कठोरता है और इससे मूलाधिकारों तथा वैयक्तिक स्वातंत्र्य के मूल पर ही आघात होता है। निरुद्ध व्यक्ति बिना दंडाधिकारी की मंजूरी के ही हवालात में निरुद्ध रखा जा सकता है, और कितने ही समय के लिये निरुद्ध रखा जा सकता है, तथा सम्भव है उसे यह भी न बताया जाये कि उसे किस कारण निरुद्ध किया गया है। उसके मामले पर केवल एक बार विचार किया जायेगा और उस पर समय-समय पर विचार नहीं होगा। मेरा निवेदन है कि यदि डॉ. अम्बेडकर और कोई बात स्वीकार न करें तो कम से कम इसे तो स्वीकार करें कि ऐसे लोगों के मामलों पर समय-समय पर, अर्थात् हर तीन मास के पश्चात् अथवा हर छह मास के पश्चात् विचार किया जायेगा। अन्यथा जहां कोई व्यक्ति निरुद्ध हुआ और मंत्रणा-मंडली ने उसे निरुद्ध रखने के संबंध में एक बार विचार किया वहां यह निश्चित हो गया कि उसके भाग्य में क्या लिखा है। उसके संबंध में कार्यपालिका जो चाहेगी, करेगी। छह महीने बाद अथवा नौ महीने बाद, अथवा बारह महीने बाद, देश की स्थिति बल सकती है। सम्भव है कुछ और बातें प्रकाश में आयें। इस बदली हुई स्थिति को तथा इन नई बातों को मंत्रणा-मंडली के सामने रखना चाहिये क्योंकि इन पर विचार करके वह सरकार को परामर्श देगी कि उस व्यक्ति को छह महीने तक, अथवा नौ महीने तक, अथवा बारह महीने तक हवालात में निरुद्ध रखना आवश्यक है या नहीं। यह बहुत ही साधारण तथा तर्कपूर्ण बात है। कृपया बन्दियों को आशा की इस अंतिम किरण से संचित न कीजिये। हममें से जिन लोगों को विभिन्न सत्याग्रह आन्दोलन में निरुद्ध होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, क्योंकि मैं इसे सौभाग्य ही कहूंगा, वे जानते हैं कि हम किस प्रकार छह मास की अवधि समाप्त होने की बाट जोहते रहते थे। हम यह विचार करते थे कि इस अवधि के समाप्त होने पर अधिकारी हमारे मामलों पर विचार करेंगे और सम्भव है वे इसकी आवश्यकता समझें, अथवा इसे उचित समझें कि हममें से कुछ लोग मुक्त किये जायें। हमारी जो भावनायें रही हैं, तथा हमारा जो अनुभव रहा है, उसे हम न भूलें। हमें यह भी न भूलना चाहिए कि यद्यपि आज हम लोग पदारूढ़ हैं किन्तु कौन कह सकता है कि कल कौन पदारूढ़ होगा और हम उस स्थिति में नहीं पड़ेंगे जिस स्थिति में आज बन्दी हैं। जो कोई भी निरुद्ध किया जाये उसे ये मूलाधिकार प्राप्त होने चाहियें। बिना इन मूलाधिकारों की प्रत्याभूति दिये हुए यह हास्यास्पद ही है कि हमसे इस अनुच्छेद को स्वीकार करने के लिये

कहा जाये और वह भी कहा जाये कि इसके द्वारा इन मूलाधिकारों को प्रत्याभूति दी गई है, यद्यपि वास्तव में बात बहुत कुछ इसके उल्टी है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर** (मद्रास : जनरल): मेरी यह प्रबल इच्छा थी कि मूल अनुच्छेद में ही "यथोचित विधि-प्रक्रिया" शब्द रख दिये जाते किन्तु दुर्भाग्य से मेरे अन्य मित्रों की यह राय नहीं और सभा में "विधि द्वारा विहित प्रक्रिया" पदावली स्वीकार की। मेरे माननीय मित्र, मसौदा समिति के सभापति ने, भी यही राय दी कि यह पदावली बहुत विस्तृत है और इसके कारण परिवर्तित अनुच्छेद 15 में किसी प्रकार की प्रत्याभूति तथा मूलाधिकार नहीं रह जायेगा। क्योंकि संसद जो भी चाहेगी कर सकेगी। इसलिये कोई ऐसा आधारभूत अधिकार नहीं है जिसे संसद समाप्त नहीं कर सकती है। संविधान के किसी खंड में जो आधारभूत बातें हों वे इस प्रकार की होनी चाहियें कि उन्हें संसद, विशेष परिस्थितियों के अतिरिक्त अन्य समय, स्वनिर्मित विधि द्वारा समाप्त न कर सके। अनुच्छेद 15 जिस रूप में पारित किया गया है उसमें इस प्रकार का परिसीमन नहीं है। इसी कारण डॉ. अम्बेडकर ने तथा मसौदा समिति ने सतर्क होकर इन खंडों को रखने का विचार किया। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि ये खण्ड अपराध प्रक्रिया संहिता में भी हैं किन्तु इन्हें संविधान में इस कारण रखना आवश्यक है। यह सम्भव है कि इस समय उस संहिता में जो कुछ है उसे बदल दिया जाये। वास्तव में मेरे बहुत से मित्र यह चाहते हैं कि यहां कुछ अधिक निबन्धन रखें जाये ताकि बाद में संसद नियमों में तथा अपराध प्रक्रिया संहिता में कोई ऐसे परिवर्तन न कर सके जिनसे ये रक्षण ही समाप्त हो जायें। उदाहरणार्थ "यथाशक्य शीघ्र" शब्दों पर आपत्ति की गई है। वे यह चाहते हैं कि सब कुछ 24 घंटे में ही कर दिया जाये। मैं यह देखता हूं कि व्यावहारिक दृष्टि से इस संबंध में वास्तव में कुछ कठिनाइयां हैं। अपराध प्रक्रिया संहिता की धारा 107 के अधीन जैसे ही कोई व्यक्ति निरुद्ध किया जाये उसे यथाशीघ्र किसी दंडाधिकारी के पास ले जाना चाहिये। उसकी चिंता नहीं की गई है कि उस दंडाधिकारी को उस मामले के संबंध में क्षेत्राधिकार प्राप्त है या नहीं। यह कमी रह गई है। एक तीसरी श्रेणी के दंडाधिकारी को—जब तक दूसरे श्रेणी के दण्डाधिकारी को इस संबंध में शक्ति प्रदान न की जाये—किसी व्यक्ति को 15 दिन की कालावधि के लिये निरुद्ध करने का प्राधिकार प्राप्त नहीं होगा। वर्तमान अपराध प्रक्रिया संहिता में यह दोष है, जो दंडाधिकारी प्रभारी न हो और जो मामले पर विचार भी न करे, 15 दिन की अधिक कालावधि के लिये किसी व्यक्ति को हवालात में निरुद्ध रखने के लिये आदेश दे सकता है। स्थिति यही है। धारा 167 में यह स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि यदि पुलिस इसके लिये अभ्यावेदन करे कि अभियुक्त को अधिक काल तक निरुद्ध रखा जाये तो उसे दंडाधिकारी के सामने पर्याप्त कारण, अर्थात् उसे जो सूचना प्राप्त है, अभियुक्त के विरुद्ध जो अभियोग है, तथा आगे चल कर उस पर जो अभियोग लगाये जायेंगे, वे सब रखने चाहियें ताकि वह इसका निर्णय कर सके कि अभियुक्त को आगे पन्द्रह दिन तक निरुद्ध रखना आवश्यक है या नहीं। सम्भव है कि पुलिस का अधिकारी यह सूचना सीधे-सीधे दे दे। इस दशा में 24 घंटे के अन्दर सूचना देने के संबंध में जो संशोधन है वह सार्थक है। किन्तु ऐसे मामले भी हो सकते हैं जिनमें इस प्रकार की सूचना देना सम्भव न हो। यदि 24 घंटे में सूचना दे

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

दी गई तो निरुद्ध करने का उद्देश्य ही विफल हो जायेगा। किसी व्यक्ति को निरुद्ध करने का उद्देश्य क्या होता है? वह इसलिये निरुद्ध किया जाता है कि वह गवाही में हस्तक्षेप न कर सके। बहुत गम्भीर मामलों में इसके कारण कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। अभियुक्त प्रायः गवाही में हस्तक्षेप करता है और उसे प्राप्त ही नहीं करने देता।

इस स्थिति में मुझे सन्देह है कि प्रत्येक मामले में अभियुक्त को 24 घंटे में वह सब सूचना देना, जो पुलिस को प्राप्त हो, उचित होगा या नहीं। कई मामलों में पुलिस अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर सकती है और अपने उत्साह में केवल सन्देह होने पर ही किसी व्यक्ति को बन्दी बना सकती है। और यह भी इच्छा प्रकट कर सकती है कि उसे पन्द्रह दिन के लिये हवालात में निरुद्ध रखा जाये। हमारी सरकार, वह सरकार जिसमें अधिकांश लोग लोक-शासन के पक्ष में हैं, इस प्रकार के दुरुपयोग को नहीं होने देगी। सुविधा इसी में होगी कि इस खण्ड को रहने दिया जाये क्योंकि यह उस धारा का स्थान लेगा जो 24 घंटे के संबंध में है। गवाही प्राप्त करने तथा उसे दंडाधिकारी तथा अभियुक्त के सामने रखने के पूर्व इस प्रकार की सूचना देना खतरनाक सिद्ध हो सकता है।

जहां तक इस सुझाव का संबंध है कि अनुच्छेद 15 (क) (1) के अन्त में "और न अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी से परामर्श करने तथा प्रतिरक्षण कराने के अधिकार से वंचित रखा जायेगा" शब्द जोड़ दिये जायें, मैं इससे सहमत हूं। हम जानते हैं कि कई मामलों में, जैसेकि सन् 1942 के आन्दोलन में, गवाहों की परीक्षा करने का अधिक अधिकार प्राप्त था।

***श्री के कामराज** (मद्रास : जनरल): यदि, उदाहरणार्थ किसी व्यक्ति की अर्थात् किसी साम्यवादी की यह इच्छा हो कि वह एक रूसी वकील से परामर्श करेगा तो क्या इसकी आज्ञा दी जायेगी?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** रूसी वकील रूस के लिये उपयुक्त हो सकता है किन्तु हमारे लिये एक भिन्न प्रकार का वकील उपयुक्त होगा। हम वकीलों के लिये पहले से बुरी भावनायें न बनायें। वास्तव में यदि वकील न होते तो यह संविधान ही अस्तित्व में नहीं आता। वे संसार के कल्याण के लिये बहुत कुछ कर रहे हैं। मैं इस विषय पर अधिक विस्तार से नहीं बोलना चाहता। आप भले ही प्रतिदिन वकीलों से लड़े, किन्तु आपको उनकी सेवाओं की आवश्यकता रहती ही है और उनके बिना आपका काम नहीं चलता। प्रायः उनकी आलोचना की जाती है। और दुर्भाग्य से उनके संबंध में भ्रम उत्पन्न हो जाता है। स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिये उन्होंने भागीरथ प्रयत्न किया हैं इसलिये यह शक्ति, अथवा यह अधिकार, विधि द्वारा दिया जाना चाहिये। मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर से पूछता हूं कि क्या इस स्थल पर वकील द्वारा प्रतिरक्षा करवाने तथा गवाहों की परीक्षा करने के संबंध में उपबंध न रखने चाहिये। इसमें संदेह नहीं कि आपात के समय कुछ नहीं किया जा सकता है किन्तु शान्ति-काल में जो व्यक्ति बन्दी किया जाये उसे यह अधिकार प्राप्त होना ही चाहिये।

मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने इस आशय के एक संशोधन की सूचना दी है कि किसी खण्ड में इसका भी उल्लेख होना चाहिये कि फैसला शीघ्र होना चाहिये। इस संबंध में अपराध प्रक्रिया संहिता में इस समय जो उपबन्ध हैं वे पर्याप्त हैं और इसलिये इस आशय के किसी खण्ड की आवश्यकता नहीं है। "शीघ्र" शब्द एक अनिश्चित शब्द है। किसी मामले में जो बात शीघ्र हुई कही जाती है वही किसी दूसरे मामले में शीघ्र नहीं हुई कही जाती है। इसलिये इस प्रकार के खण्ड की आवश्यकता नहीं है।

मैं इसके पक्ष में हूं कि प्रत्येक ऐसे मामले में, जिसमें दंड दिया जाये अथवा दंड सुनाया जाये, कम से कम एक बार अपील कराने का अधिकार अवश्य ही होना चाहिये क्योंकि किसी एक ही व्यक्ति को किसी के स्वातंत्र्य के संबंध में निर्णय करने की शक्ति नहीं दी जा सकती। अपराध-संबंधी वर्तमान विधि में व्यक्ति की रक्षा की अपेक्षा सम्पत्ति की रक्षा की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। यह एक दुर्भाग्य की बात है कि पहली सरकार ने और हमारे विजेताओं ने मनुष्यों को उतना मूल्यवान नहीं समझा जितना कि उन्होंने समिति को समझा। मूल्यांकन के इस आधार को बदलने की आवश्यकता है। हम किसी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति के आधार पर, अथवा उसकी साक्षरता के आधार पर, मत देने का अधिकार प्रदान नहीं कर रहे हैं। संविधान के अधीन प्रत्येक मनुष्य को मत देने का अधिकार प्राप्त है। इसलिये प्रत्येक मनुष्य की हर प्रकार रक्षा करने की आवश्यकता है। मनुष्य योनि एक पवित्र योनि है। इस दृष्टि से मैं यह चाहता हूं कि कम से कम एक बार अपील करने का अधिकार दिया जाना चाहिये और इसका संविधान में उल्लेख होना चाहिये।

निवारक निरोध के संबंध में, मेरे माननीय मित्र डॉ. बख्शी टेकचन्द को इस संबंध में संविधान में कोई उपबन्ध रखने पर आपत्ति है। उन्होंने कहा है कि संसार के किसी भी संविधान में निवारण निरोध के संबंध में उपबन्ध नहीं है। उनका आशय यह है कि संसद को इसकी स्वतंत्रता है कि वह किसी अपराध के निवारण के लिये विधि बनाये। इस खण्ड में संसद को इस प्रकार की शक्ति नहीं प्राप्त होती है। हम यह माने लेते है कि इस शक्ति का यहां पर उल्लेख नहीं है। जब तक आप स्पष्ट शब्दों में नहीं कहते हैं कि किसी प्रकार का निवारक निरोध नहीं होना चाहिये तब तक क्या संसद को इसकी स्वतंत्रता नहीं होगी कि.....

***पं. ठाकुर दास भार्गव** (पूर्वी पंजाब : जनरल): वर्तमान धारा के अधीन संसद बाद को इस आशय की कोई विधि नहीं बना सकेगी कि कोई भी व्यक्ति तीन मास से कम कालावधि के लिये हवालात में निरुद्ध रखा जा सकता है। वास्तव में इससे स्थानीय कार्यपालिका को किसी व्यक्ति पर बिना मुकदमा चलाये हुए ही उसे तीन मास तक हवालात में निरुद्ध रखने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। बाद को संसद तीन मास की अवधि के बारे में कुछ नहीं कर सकेगी। कठिनाई यह है।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** उपबन्ध इस प्रकार है:

"जब तक कि ऐसे व्यक्तियों से, जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हैं, रह चुके हैं अथवा नियुक्त होने की अर्हता रखते हैं, मिलकर बनी मंत्रणा-मंडली ने तीन महीने की उक्त कालावधि की समाप्ति के पूर्व प्रतिवेदित नहीं किया है कि ऐसे निरोध के लिये उसकी राय में पर्याप्त कारण है।"

इसका मैं यह निर्वचन नहीं करता कि संसद को तीन मास की कालावधि बदलने की शक्ति प्राप्त नहीं होगी। उसमें केवल यह कहा गया है कि प्राधिकारियों को अधिक से अधिक तीन मास तक निरुद्ध रखने की शक्ति प्रदान की जाती है। बिना मामले को मंत्रणा-मंडली के सामने रखे हुए वे तीन मास की कालावधि को बढ़ा नहीं सकते हैं। उस में संसद के अधिकार का उल्लेख नहीं है। असल में बात यह है, जब कोई व्यक्ति बन्दी किया जाये तो यह आवश्यक है कि उसका मामला मंत्रणा-मंडली के सामने रखा जाये। चाहे जो भी शब्द हों किन्तु मेरा यह विश्वास है कि संसद को यह कहने का अधिकार है, कि इस खण्ड के होते हुए भी, किसी व्यक्ति के निवारक निरोध के हेतु बन्दी किये जाने पर तुरन्त ही उसका मामला मंडली के सामने रखा जायेगा और वह जो भी निर्णय करना चाहेगी, करेगी और वह भी कह सकेगी कि वह व्यक्ति तीन मास के पहले ही मुक्त कर दिया जाये।

***श्री जसपतराय कपूर:** खण्ड (4) के अधीन बनी हुई विधि के अधीन निरुद्ध कोई व्यक्ति क्या अपने मामले को मंडली के विचारार्थ उसके सामने रखवा सकेगा?

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** जी हां।

***श्री जसपतराय कपूर:** जी नहीं, उसे यह सुविधा प्राप्त नहीं होगी।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर:** खण्ड इस प्रकार है:

"संसद विधि द्वारा विहित कर सकेगी कि किन परिस्थितियों के अधीन तथा किस प्रकार या प्रकारों के मामलों में किसी व्यक्ति को निवारक-निरोध को उपबंधित करने वाली किसी विधि के अधीन निरुद्ध किया जा सकेगा और कितनी अधिकतम कालावधि के लिये वह व्यक्ति इस प्रकार निरुद्ध किया जा सकेगा।"

यह सच है कि दिखाई यह देता है कि यह केवल उन मामलों के संबंध में प्रयुक्त होगा, जिनमें किसी व्यक्ति को तीन मास से अधिक समय के लिये निरुद्ध रखने का प्रयास किया जायेगा। यदि यह तीन मास से कम कालावधि के बारे में है तो इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि इस संबंध में संसद् को अधिकार प्राप्त है या नहीं। इस अनुच्छेद के जिन शब्दों को मैंने पढ़कर सुनाया है, उनका उद्देश्य यह नहीं प्रतीत होता है कि संसद के अधिकारों को सीमित किया जाये। हो सकता है इसके फलस्वरूप पुलिस से सूचना प्राप्त करने का अधिकार न रहे।

सम्भव है, संसद को इसकी स्वतंत्रता होगी कि वह पुलिस को इस संबंध में किसी प्रकार की सूचना न देने की शक्ति प्रदान करे। इस अर्थ में संसद को नागरिक की स्वतंत्रता को परिसीमित करने की शक्ति ले ली गई है। अन्यथा जहां कहीं मंत्रणा-मंडली गठित होगी वहां बिना मंडली के परामर्श के कोई व्यक्ति तीन मास से अधिक समय के लिये निरुद्ध नहीं रखा जा सकता है, चाहे इस संबंध में संसद ने विधि बनाई हो या न बनाई हो। संसद को इस संबंध में विधि बनानी होगी कि किस परिस्थिति में, कौन पदाधिकारी और किस श्रेणी का पदाधिकारी, किसी व्यक्ति को निवारक निरोध के निमित्त हवालात में निरुद्ध कर सकता है।

मैं देखता हूं कि यहां एक कमी रह गई है। मै यह नहीं समझ पाया हूं कि क्या मंत्रणा-मंडली को इसकी स्वतंत्रता है कि वह समय-समय पर अर्थात् तीन मास में या छह मास में कम से कम एक बार मामलों पर पुनर्विचार करे। 1942 में जो लोग निरुद्ध किये गये थे उनके मामलों पर छह मास में एक बार विचार किया जाता था। परन्तुक (क) की जैसी शब्दावली है, उसमें इस प्रकार का कोई उपबन्ध नहीं है। इस परन्तुक को यथोचित रूप से संशोधित करना चाहिये ताकि मंडलों को इन मामलों पर पुनर्विचार करने की शक्ति प्राप्त हो जाये। मसौदा समिति के सभापति महोदय ने कई कठिनाइयों की कल्पना की है और उन सभी को दूर करने के लिये उन्होंने उपबन्ध रखे हैं। किन्तु एक कमी रह गई है वे किसी समय भी तीन मास तक कारागार में नहीं रहे और इसलिये वे इसकी कल्पना नहीं कर सके कि अन्य लोगों को क्या कष्ट झेलने होते हैं। पहली सरकार ने भी मामलों पर छह मास में एक बार पुनर्विचार करने के संबंध में उपबन्ध रखा था, यद्यपि यह कहा जा सकता था कि यह पुनर्विचार-विषयक उपबन्ध निरर्थक था। किन्तु यह दूसरी बात है। हमें यहां समय-समय पर पुनर्विचार करने के संबंध में उपबन्ध रखने चाहियें। मंत्रणा-मंडली की एक ही बैठक नहीं होनी चाहिये। तीन या छह मास के पश्चात् कई ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जिनके आधार पर उस व्यक्ति को मुक्त करना आवश्यक हो सकता है। इसलिये यह उपबन्ध उस विधि के अधीन होना चाहिये जिसमें समय-समय पर पुनर्विचार करने की व्यवस्था की गई हो।

अन्त में मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारे कुछ मित्रों ने इस आशय का एक संशोधन रखा है कि किसी व्यक्ति को एक वर्ष से अधिक समय के लिए निरुद्ध न रखा जाये। मैं इससे सहमत हूं कि प्रथम बार किसी को तीन मास से अधिक समय के लिये निरुद्ध न किया जाये, और अधिक से अधिक एक वर्ष के लिये निरुद्ध किया जाये, किन्तु आयात आदि के समय कुछ विशेष मामले भी उठ सकते हैं। ऐसे मामलों के अतिरिक्त अन्य मामलों के संबंध में एक वर्ष का निर्बन्धन होना चाहिये....

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** आपात काल में ये उपबंध प्रभावी नहीं रहेंगे।

***श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगरः** यदि ये उपबन्ध साधारण मामलों के संबंध में है तो किसी ऐसे राजनैतिक दल का भी उदय हो सकता है, जिसके सदस्य हमारे ही समान काले रंग के लोग हों और जो लोगों की आंखें फोड़ कर अथवा हाथ काट कर अथवा अन्य किसी प्रकार के बर्बर उपायों को काम में लाकर

[श्री एम. अनन्तशयनम् आयंगर]

अपना आन्दोलन चलायें। मैं कह नहीं सकता कि इस दल के सदस्यों के साथ किस प्रकार व्यवहार करना चाहिये। उनकी इस प्रकार की चाले हैं और मैं कह नहीं सकता कि वे अपना रवैया बदलेंगे भी या नहीं। ऐसी स्थिति में राज्य के कल्याण के लिये क्या यह युक्तियुक्त नहीं है कि हम एक ऐसा उपबन्ध रखें जिसमें निरोध-काल सीमित नहीं किया गया हो? हो सकता है कि पदाधिकारी अथवा कार्यपालिका इस शक्ति का दुरुपयोग करे। इसलिये मैं यह कहूंगा कि प्रथम बार एक वर्ष तक निरुद्ध रखा जाये। किन्तु विशेष मामलों में एक वर्ष और निरुद्ध रखा जाये। हमें किसी ऐसे व्यक्ति को निरुद्ध रखने की अधिकतम कालावधि भी निश्चित कर देनी चाहिये। इस पर भी विचार करना चाहिये कि क्या संसद को इसकी स्वतंत्रता नहीं देनी चाहिये कि वह स्थिति देखकर अधिकतम कालावधि निश्चित करे। यदि इस समय एक वर्ष की कालावधि निर्धारित की जाती है तो सम्भव है बिना संविधान में संशोधन किये हुए, जिसके लिये दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता होगी, उसे नहीं बदला जा सके। मैं इस विचार से पूर्णतया सहमत नहीं हूं। इसलिये मैं चाहता हूं कि जो सुझाव मैंने प्रस्तुत किया है उसके अनुसार रूपभेद किया जाये। अन्यथा "विधि विहित" प्रक्रिया से बहुत स्वतंत्रता मिल जायेगी और सरकार किसी नागरिक के स्वातंत्र्य को सीमित ही न कर सकेगी बल्कि उसे मनमाने ढंग से कारागार में भी बन्द करा सकेगी। यदि कोई ऐसा प्रतिद्वन्द्वी दिखाई देगा, जो निर्वाचन में विरोध करेगा तो सम्भावना इसी की होगी कि वह कारागार में बन्द कर दिया जायेगा। इसलिये इस खण्ड में यह उपबन्ध रखकर थोड़ा बहुत सुधार कर दिया जाये कि किसी व्यक्ति की प्रतिरक्षा के लिये वकील रखा जा सकता हैं कोई ऐसा उपबन्ध भी रख देना चाहिये जिससे मंत्रणा मंडली तीन मास के अन्दर मामलों पर विचार कर सके, और कालावधि भी निश्चित कर देनी चाहिये, तथा संसद को यह शक्ति भी प्रदान कर देनी चाहिये कि वह जब चाहे इस संबंध में दूसरी व्यवस्था करे।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, डॉ. अम्बेडकर मुझे इसके लिये क्षमा करें किन्तु मुझे बड़ी प्रसन्नता होती यदि डॉ. अम्बेडकर तथा मसौदा-समिति के अन्य सदस्य मसौदा समिति में आने के पूर्व कारावास का कुछ अनुभव कर चुके होते।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं अब उस अनुभव को प्राप्त करने का प्रयास करूंगा।

***श्री महावीर त्यागी:** यद्यपि डॉ. अम्बेडकर को ब्रिटिश सरकार ने यह सौभाग्य प्राप्त नहीं कराया किन्तु मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूं कि जो संविधान वे अपने हाथ से बना रहे हैं उससे उन्हें यह अनुभव अपने जीवन-काल में भी प्राप्त हो जायेगा। एक दिन वह आयेगा कि जिन खण्डों को वे रच रहे हैं उन्हीं के अधीन उन्हें निरुद्ध किया जायेगा *(विघ्न)*। तब उनकी समझ में आयेगा कि उन्होंने क्या गलती की थी। जब तक सभा का अधिवेशन होता है और सदस्य इन जगहों पर

बैठे रहते हैं तब तक सब कुछ सुरक्षित ही है। किन्तु हमें ऐसे उपबन्धों का निर्माण नहीं करना चाहिये जिनको शीघ्र ही हमारे विरुद्ध भी प्रयोग किया जा सकता है। ऐसा समय भी आ सकता है जब ये खण्ड, जिन पर हम आज विचार कर रहे हैं, किसी सरकार द्वारा अपने राजनैतिक विरोधियों के विरुद्ध स्वतंत्रता से प्रयोग में लाये जायेंगे।

श्रीमान्, इस अनुच्छेद में हम लोगों को अधिकार तथा विशेषाधिकार प्रदान करने जा रहे हैं। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ है कि मसौदा-समिति तथा उसके मित्रों तथा परामर्शदाताओं ने इस स्थल पर दंड-विषयक खंडों को भी रख दिया है, हम इस समय जिस पत्र पर विचार कर रहे हैं वह स्वतंत्रता का अधिकार पत्र है। किन्तु क्या इस स्वतंत्रता को इसी स्थल पर परिसीमित कर देना चाहिये? जब स्वतंत्रता की प्रत्याभूति दी जा रही है तो मसौदा-समिति ऐसे उपबन्धों को क्यों रखना चाहती है जिनके आधार पर लोग निरुद्ध किये जा सकेंगे और उनकी स्वतंत्रता परिसीमित की जा सकेगी? इस अनुच्छेद के आधार पर भावी सरकारें लोगों को निरुद्ध कर सकेंगी और उन्हें स्वतंत्रता की प्रत्याभूति देना तो दूर रहा, उनकी स्वतंत्रता का अपहरण का सकेंगी।

श्रीमान्, जीवन, स्वातंत्र्य तथा सुख प्राप्ति प्रत्येक व्यक्ति के मूलाधिकार हैं। राज्य अपने किसी अधिकार के कारण अस्तित्व में नहीं आता। वह इस कारण अस्तित्व में आता है कि चूंकि व्यक्ति अपने जीवन और स्वातंत्र्य के जन्मसिद्ध अधिकारों के एक अंश को राज्य को सौंप देता है। सब व्यक्ति जन्म से समान होते हैं। एक सिद्धान्त यह है। इसलिये प्रत्येक व्यक्ति को जीवन-स्वातंत्र्य, स्वतंत्रता तथा सुख प्राप्ति के लिये प्रयत्न करने का जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त है। ये अधिकार देहस्थ हैं और देह से पृथक् नहीं किये जा सकते है। यदि कोई आदमी इन अधिकारों का अपहरण भी करना चाहे तो, मेरा निवेदन है, कि इनका अपहरण नहीं किया जा सकता क्योंकि वे अधिकार देहस्थ हैं और देह से पृथक् नहीं किये जा सकते। किन्तु व्यक्ति अपने देहस्थ अधिकारों में से कुछ को स्वेच्छा से दे देते हैं और इस प्रकार सब सामाजिक अधिकार एक जगह इकट्ठा होकर राज्य की संज्ञा प्राप्त कर लेते हैं।

इस प्रकार राज्य का निर्माण तथा संगठन लोगों को अपने देहस्थ अधिकारों से वंचित करने से नहीं होता। लोग अपने अधिकारों की वृद्धि करने के लिये ही स्वेच्छा से उनका निर्माण करते हैं और इस प्रकार वैयक्तिक स्वातंत्र्य की अभिवृद्धि करते हैं। लोग इसी उद्देश्य तथा इसी आशा से समाज का निर्माण करते हैं कि उन्होंने जो अधिकार प्रदान किये हैं उनके पूंजीभूत होने से प्रत्येक व्यक्ति पूर्ण स्वातंत्र्य को प्राप्त कर सकेगा और सुख-सम्पन्नता की प्राप्ति के लिये स्वतंत्रता से यत्न कर सकेगा। और यह कि राज्य व्यक्तिगत स्वातंत्र्य की रक्षा करेगा और उस में किसी व्यक्ति को हस्तक्षेप न करने देगा।

हम इन अन्तरभूत अधिकारों की प्रत्याभूति देने के लिये एक संविधान बना रहे हैं। जिस संविधान का उद्देश्य यह है कि नागरिकों को मूलाधिकारों की प्रत्याभूति दी जाये, उसमें निरोध-संबंधी कोई खण्ड सुसंगत कैसे कहा जा सकता है। मेरे

[श्री महावीर त्यागी]

विचार से यहां इस प्रकार के खण्ड को रखने से मूलाधिकारों का अध्याय एक दंड संहिता हो जायेगा और वह संहिता पहली सरकार के भारत प्रतिरक्षा नियमों से भी खराब होगी। मैं भारत प्रतिरक्षा नियमों के अधीन बहुत काल तक कारागार में रहा। मैंने इस प्रकार का कारावास झेला है। कितना अच्छा होता कि डॉ. अम्बेडकर भी मेरे साथ बन्दी किये जाते तथा रात भर हथकड़ी पहने रहने के पश्चात् कारागार में रहते। अच्छा होता कि मुझे जो अनुभव हुआ है वह उन्हें भी होता। यदि मेरे साथ उन्हें भी हथकड़ी लगती तो उन्हें ज्ञात होता कि उसमें कितना कष्ट होता है। श्रीमान्, मेरे विचार से, जो उपबन्ध वे इस समय रख रहे हैं वे उनके ही विरुद्ध प्रयोग किये जायेंगे। जैसे ही कोई अन्य राजनैतिक दल पदारूढ़ होगा वे तथा उनके सहकारी उन्हीं उपबन्धों के शिकार होंगे जिन्हें वे इस समय रख रहे हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** चाहे कोई संविधान रहे या न रहे।

***श्री महावीर त्यागीः** उर्दू में एक शेर है:

"काट रहे हैं अपनी मिनकारों से हलका जाल का।"

हम यही कर रहे हैं। हम ऐसे उपबन्ध रख रहे हैं जिनसे भावी सरकारें हमें बहुत आसानी से तथा विधिसंगत ढंग से निरुद्ध कर सकेंगी। श्रीमान्, इसका यही अर्थ है। मैं इस विषय पर अधिक नहीं बोलना चाहता। मैं सभा को केवल यह चेतावनी देना चाहता था कि यदि हम इस अनुच्छेद को स्वीकार करेंगे तो हम एक ऐसा उपबन्ध रखेंगे जो हमारे विरुद्ध भी प्रयोग किया जा सकता है।

***अध्यक्षः** आप उसे दे चुके हैं। जहां तक विवरण का संबंध है, उसके संबंध में अन्य वक्ता विस्तृत रूप से बोल चुके हैं।

***श्री महावीर त्यागीः** यदि आपका यह विचार है तो मैं केवल इस उपबन्ध के दोषों की ही चर्चा करूंगा।

***अध्यक्षः** अन्य वक्ता दोषों को विस्तृत रूप से बता चुके हैं। आप अब उनकी ही बातें दुहरायेंगे।

***श्री महावीर त्यागीः** जी नहीं, श्रीमान्, मैं उनके तर्कों को नहीं दुहराऊंगा।

यहां यह उल्लिखित है कि इस अनुच्छेद की कोई बात-(क) जो व्यक्ति तत्समय शत्रु अन्यदेशीय है उसको लागू न होगी इस संबंध में कोई मतभेद नहीं है—और (ख) जो व्यक्ति निवारक निरोध उपबंधित करने वाली किसी विधि के अधीन बन्दी किया गया है उसको लागू न होगी। श्रीमान्, जो लोग निवारक निरोध उपबंधित करने वाली विधि के अधीन निरुद्ध किये जायेंगे उन्हें, इस परन्तुक के अनुसार, अपने मामलों की जांच एक मंत्रणा-मंडली से करवाने का विशेषाधिकार प्राप्त होगा। जिन लोगों को सरकार तीन मास से अधिक काल के लिये निरुद्ध

करेगी उनके मामलों की जांच, अथवा उन पर पुनर्विचार, एक मंत्रणा-मंडली करेगी। किन्तु जिन लोगों का वर्णन खण्ड (4) के अधीन किया गया है उनके मामलों पर पुनर्विचार नहीं किया जायेगा। कहा यह गया है कि "जब तक कि ऐसा व्यक्ति इस अनुच्छेद के खण्ड (4) के अधीन संसद-निर्मित किसी विधि के उपबन्धों के अनुसार निरुद्ध नहीं है," जिसका अर्थ श्रीमान्, यह है कि खण्ड (4) के अधीन संसद् द्वारा निर्मित विधियों के अधीन निरोध के जितने भी मामले आयेंगे उन पर मंत्रणा-मंडली पुनर्विचार नहीं करेगी और जिन लोगों के ये मामले होंगे उन्हें यह विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होगा। मैं यह जानना चाहता हूं कि खण्ड (4) के अधीन संसद द्वारा निर्मित विधि के किन्हीं उपबन्धों के अधीन जो मामले आयेंगे उनके संबंध में मंत्रणा-मंडली अपना प्रतिवेदन क्यों नहीं प्रस्तुत करेगी? जब हम इस स्थल पर मंत्रणा-मंडली के संबंध में उपबन्ध रख रहे हैं तो हम ऐसे लोगों के मामलों को भी सम्मिलित कर सकते थे जो उन विधियों के अधीन निरुद्ध किये जायेंगे जिन्हें आगे चल कर खण्ड (4) के अधीन संसद बनायेगी। मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने अनुच्छेद 15 का दुरुपयोग न होने देने के लिये रक्षणों की मांग करके वास्तव में इस सभा का अहित किया है। डॉ. अम्बेडकर ने अधिक प्रत्याभूतियां तो नहीं दी हैं किन्तु अपराध प्रक्रिया संहिता से कुछ खण्ड ले कर रख दिये हैं। ये कोई नई प्रत्याभूतियां नहीं हैं। किन्तु इन खण्डों के साथ ही निरोध-विषयक एक खण्ड रख दिया गया है।

श्रीमान्, मेरा निवेदन है कि संविधान सभा को भावी सरकारों को ऐसी शक्तियां नहीं प्रदान करनी चाहियें जिनसे वे लोगों को निरुद्ध कर सकें। आने वाली पीढ़ियां, यदि इसकी आवश्यकता देखेंगी, और ऐसी विधियां बना कर लोगों में जो रोष फैलेगा उसकी यदि उन्हें चिन्ता नहीं होगी, तो वे ये शक्तियां प्रदान करें। संविधान सभा का यह काम नहीं है। मैंने कहीं भी यह नहीं पढ़ा कि संसार के किसी भी संविधान में संविधान के निर्माताओं ने अपराध-संबंधी किसी विधि को रखा। हमें लोगों को अधिकारों की प्रत्याभूति देनी है और उनके अधिकारों का अपहरण करने के लिये अपराध-विषयक विधियां नहीं बनानी हैं। हमने लोगों को जनमत संग्रह अथवा जनमत-खण्डन का अधिकार तो दिया नहीं है किन्तु फिर भी जो भी मूलाधिकार प्रदान किया है उसे किसी न किसी प्रकार परिसीमित कर दिया है। इस अनुच्छेद में इसका केवल परिसीमन ही नहीं किया गया है बल्कि खण्डन भी किया गया है। इन अधिकारों का पूर्ण रूप में खण्डन किया गया है। मैं इस प्रकार के अनुच्छेद को समाविष्ट करने के पक्ष में कभी भी नहीं हो सकता।

यदि डॉ. अम्बेडकर तथा मसौदा-समिति इसके लिये तैयार है तो उनसे मेरा अनुरोध है कि वे लोगों को किसी ऐसी सरकार का तख्ता उलटने के लिये शक्ति प्रदान करे जो उनके मूलाधिकारों का खण्डन करे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि लोगों को उस सरकार को उलटने, समाप्त करने अथवा बदलने का अधिकार है। उन्हें एक ऐसी सरकार को स्थापित करने का भी अधिकार है जो उनके विचार से उनके सुख तथा सुरक्षा को सुनिश्चित करेगी।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यह वहिसंविधानिक अधिकार है।

***श्री महावीर त्यागी:** लोगों की शक्ति का कुल उल्लेख संविधान में भी होना चाहिये। क्या आपने किसी स्थल पर लोगों को उस सरकार का तख्ता उलटने का अधिकार दिया है जो उनके अधिकारों को खण्डन करे? आपने लोगों के इस जन्मसिद्ध अधिकार की प्रत्याभूति नहीं दी है। हमें केवल सरकार के ही अधिकारों की प्रत्याभूति नहीं देनी चाहिये। हमें इसकी भी चिंता होनी चाहिये कि सरकार के साथ लोगों के भी कुछ अधिकार हों, इस संविधान के पारित होने पर एक पूर्णसत्तात्मक सरकार स्थापित हो जायेगी। मैं सभा को चेतावनी देता हूं कि यदि हम लोगों के अधिकारों पर इतने अधिक निर्बन्धन लगायेंगे और सरकार को ऐसी शक्तियां प्रदान करेंगे जो वह लोगों के विरुद्ध प्रयोग करें, तो सम्भव है कि लोग सरकार में ही इस भयास्पद शक्ति-संकेन्द्रण को पसंद न करें। सरकार को केवल वे अधिकार प्राप्त हो सकते हैं जो लोग स्वेच्छा से उसे दें। जिन शक्तियों को लोग स्वेच्छा से किसी सरकार को नहीं देना चाहें उन्हें प्राप्त करने का अधिकार किसी भी सरकार को नहीं है। इन शब्दों के साथ मैं मसौदा समिति से प्रार्थना करता हूं कि यह अनुच्छेद बिल्कुल ही निकाल दिया जाये।

***डॉ. पी.के. सेन** (बिहार : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी की ओजस्वी अपील के पश्चात् सम्भव है मेरा एक भिन्न प्रकार का भाषण उतना चित्ताकर्षक प्रतीत न हो। यह प्रश्न ही नहीं उठता कि व्यक्ति को ऐसे अधिकार प्राप्त हैं या नहीं। उनकी रक्षा अवश्य ही की जानी चाहिये। किन्तु साथ ही जहां तक मैं इस वाद-विवाद की गतिविधि को समझ पाया हूं, सभा का यह मत है कि कई परिस्थितियां ऐसी भी हैं जिनसे केवल हमारा देश ही नहीं बल्कि संसार का प्रत्येक देश कुछ ऐसी कार्यवाहियां करने के लिये विवश है जिनसे राज्य अवैध कार्यों से बच सके। प्रश्न केवल यह है कि वैयक्तिक अधिकार का, अर्थात् व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा सुरक्षा के मूलाधिकार का, राज्य की सुरक्षा के हेतु कितना परिसीमन होना चाहिये। यह व्यक्ति बनाम राज्य का पुराना प्रश्न है, अर्थात् यह इसका प्रश्न है कि दोनों के अधिकारों का किस प्रकार समायोजन हो और वैयक्तिक स्वातंत्र्य का अन्त न करके, और केवल परिसीमन करके, किस प्रकार सारे राज्य का कल्याण किया जाये।

श्रीमान्, सभा के सम्मुख मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव, डॉ. बख्शी टेकचन्द और अन्य कई वक्ताओं ने जो ब्यौरा रखा है उसकी मैं चर्चा नहीं करना चाहता। इस पर पूर्ण रूप से विचार-विमर्श हो चुका है कि "यथोचित विधि-प्रणाली" शब्द रखे जायें अथवा "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया" और इन पदावलियों का इतिहास भी बताया जा चुका है। मैं आज सभा के सामने एक छोटे से प्रश्न पर बोलने जा रहा हूं। मेरे माननीय मित्र बख्शी टेकचंद ने बन्दी को अथवा निरुद्ध व्यक्ति को, उसके बन्दी किये जाने के कारणों के बारे में सूचित करने के संबंध में जो संशोधन उपस्थित किया है उसका मैं समर्थन करना चाहता हूं। कम से कम इतना तो किया ही जा सकता है और यह करना ही चाहिये। इसका संकेत मिला है कि डॉ. अम्बेडकर इस संशोधनों को स्वीकार करना चाहते थे किन्तु उन पर बाह्य शक्तियों का दबाव पड़ा। यह भी कहा गया है कि डॉ. अम्बेडकर इस सभा में दो रूपों में उपस्थित हैं—एक तो उनका वह सरल रूप है जिसकी व्यक्ति से अत्यंत सहानुभूति है और इस रूप में वे उसके अधिकारों तथा स्वातंत्र्य को सुरक्षित

रखना चाहते हैं और एक रूप बहुत कुछ उनका भूत है जो हैमलेट नाटक के भूत के समान चिंतित है और घूमता रहता है और स्वातंत्र्य प्रेम होने पर भी अन्य शक्तियों के वश में है। श्रीमान्, मुझे विश्वास नहीं है कि इसके लिये वे जिम्मेदार हैं और मसौदा समिति जिम्मेदार है। मसौदा समिति को अथवा उन लोगों को जिन पर इन अनुच्छेदों के मसौदे बनाने का भार है, हम विरोधी दल के रूप में न देखें, अथवा अपने को उनका विरोधी दल न समझें। सीधा-सादा प्रश्न यह है—क्या नागरिक को कम से कम अधिकार दे दिया गया है या नहीं दिया गया है। मेरा विश्वास है कि जब कोई व्यक्ति निरुद्ध किया जाये तो उसे यह जानने का अधिकार अवश्य ही प्राप्त है कि उसे किन कारणों से बन्दी अथवा निरुद्ध किया गया है। कम से कम इतना तो किया ही जा सकता है। इस अनुच्छेद में ऐसी मंडली के संबंध में उपबन्ध रखे जा चुके हैं जिसमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, अथवा भूतपूर्व न्यायाधीश, अथवा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त होने की योग्यता रखने वाले व्यक्ति रहेंगे। यह मंडली इस प्रश्न पर विचार करेगी कि निरुद्ध रखने के लिये पर्याप्त कारण हैं या नहीं और इस प्रश्न पर भी विचार करेगी कि तीन मास का निरोध-काल पर्याप्त है अथवा उसे बढ़ाने की आवश्यकता है। इस दशा में यह मंडली बहुत आसानी से इसका पता लगा सकती है कि निरुद्ध व्यक्ति किन कारणों से बन्दी किया गया है।

सुझाव यह नहीं है कि बन्दी किये हुए व्यक्ति के सामने पूरी गवाही रखी जाये क्योंकि यह सच है कि जिन लोगों पर अवैध कार्यवाहियों का आरोप लगाया जाती है उनके संबंध में गवाही प्राप्त करना बहुत कठिन होता है और बनावटी गवाही से सच्ची गवाही का निराकर भी किया जा सकता है। इसलिये निरुद्ध अथवा बन्दी करने के कारण बताते हुए यह आवश्यक नहीं है कि निरुद्ध व्यक्ति की गवाही का पूरा ब्यौरा दिया जाये। संशोधन में यह सुझाव नहीं रखा गया है। केवल यह सुझाव रखा गया है कि जैसे ही कोई व्यक्ति बन्दी किया जाये उसका मामला इस नियुक्त होने वाली मंडली के सामने रखा जाये और उस पर विचार करने के पश्चात् मंडली तुरंत ही उस व्यक्ति को सूचित करे कि वह किन कारणों से निरुद्ध किया गया है ताकि वह जान सके कि वह किस स्थिति में है। हो सकता है कि वह कुछ ऐसी बातें बताये जिनसे यह स्पष्ट हो जाये कि वह अकारण ही बन्दी कर लिया गया है। इसलिये मैं इस पर बहुत जोर देता हूं कि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

जो अन्य तर्क उपस्थित किये गये हैं उन्हें मैं नहीं दुहराऊंगा। इस अनुच्छेद के उपबंधों में मूलाधिकारों का खण्डन करने वाली भी कुछ बातें दिखाई दे सकती हैं किन्तु, जैसा कि मैं कह चुका हूं, इस देश के तथा संसार के अन्य देशों के भी इस संकटपूर्ण काल को देखते हुए राज्य की सुरक्षा के लिये कुछ विशेष उपबन्धों की आवश्यकता है और मुझे आशा है कि अनुच्छेद 15-क पर विचार करते समय सभा इसे दृष्टि में रखेगी और भावनावश यह विचार नहीं करेगी कि वह सारे अनुच्छेद 15-क को ही निकाल सकती है। मैं इस उग्र विचारधारा का समर्थन कभी भी नहीं कर सकता। इसलिये मेरा यह निवेदन है कि मसौदा समिति कृपा करके इस संशोधन पर गम्भीरता से विचार करे और इसे स्वीकार कर ले। श्रीमान्, मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): अध्यक्ष महोदय, डॉ. अम्बेडकर ने हमारे सामने जो अनुच्छेद रखा है उसमें दो विषयों का उल्लेख है अर्थात् निरुद्ध व्यक्तियों को अपराध प्रक्रिया संहिता के अधीन जो सामान्य अधिकार प्राप्त हैं उन्हें संविधानिक प्रत्याभूतियों का रूप देना और निवारक-निरोध-विषयक विधियों के अधीन निरुद्ध व्यक्तियों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करना। जहां तक पहले प्रश्न का संबंध है उस पर इतने विस्तृत रूप से विचार किया जा चुका है कि मैं उसके संबंध में केवल इतना कहना चाहता हूं कि मैं पंडित ठाकुर दास भार्गव के इस प्रस्ताव से सहमत हूं कि यदि कोई दंडाधिकारी किसी व्यक्ति को 24 घंटे से अधिक समय तक निरुद्ध रखने की आज्ञा दे तो वह अपने हाथ से लिखे कि यह किन कारणों से किया जा रहा है और अभियुक्त को मुकदमा चलाने वालों के गवाहों की परीक्षा करने तथा अपनी प्रतिरक्षा के लिये तर्क उपस्थित करने का अधिकार होना चाहिये। और प्रत्येक दोष सिद्धि के विरुद्ध कम से कम एक बार अपील करने की आज्ञा मिलनी चाहिये। श्रीमान्, यह सच है कि वर्तमान अपराध-विधि के अधीन अभियुक्तों को इनमें से अधिकांश अधिकार प्राप्त हैं किन्तु यदि इनमें से कुछ अधिकारों को संविधानिक अधिकार बनाना है तो उचित यही है कि संविधान में इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण अधिकारों का उल्लेख हो क्योंकि बिना उनके मुकदमों का न्यायोचित फैसला नहीं हो सकता।

अब मैं डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के दूसरे भाग को उठाता हू। इस संशोधन का खण्ड (3) इस प्रकार है:

> "इस अनुच्छेद में की कोई बात—जो व्यक्ति निवारक निरोध उपबंधित करने वाली किसी विधि के अधीन बन्दी या निरुद्ध किया गया है उसको लागू न होगी।"

विभिन्न प्रान्तों के लोक सुरक्षा अधिनियमों के अधीन जो व्यक्ति बन्दी किया जाता है उसे तुरंत ही सूचित किया जाता है कि वह किन कारणों से बन्दी अथवा निरुद्ध किया जा रहा है किन्तु संविधान में हम बन्दी किये हुए व्यक्ति को वह अधिकार भी नहीं दे रहे हैं जो उसे इस समय प्रान्तीय लोक सुरक्षा अधिनियमों के अधीन प्राप्त है। इसलिये, मेरे विचार से चाहे बन्दी का मामला मंत्रणा-मंडली के सामने रखा जाये या न रखा जाये, उसे बन्दी किये जाने के बाद यथाशीघ्र कम से कम यह सूचित किया जाना चाहिये कि वह किन कारणों से बन्दी किया गया है और उसे सरकार को अपनी सफाई देने का अवसर देना चाहिये। मेरा यह भी निवेदन है कि जब कोई मामला मंत्रणा-मंडली के सामने रखा जाये तो निरुद्ध व्यक्ति को मंडली के सामने, यदि वह चाहे तो, एक और अभ्यावेदन रखने का अवसर देना चाहिये। इसके अतिरिक्त मंडली को इसकी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि यदि वह चाहे तो सरकार से कहे कि वह बन्दी की सफाई को उसके सामने रखे यदि सरकार अभियुक्त की सफाई को मंडली के सामने न रखना चाहे तो उसे अभियुक्त को मुक्त करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये।

खण्ड (3) के संबंध में मेरा दूसरा सुझाव यह है कि चाहे राज्य की सरकार बन्दियों के मामलों को समय-समय पर मंत्रणा-मंडली के सामने रखना चाहे या

न रखना चाहे किन्तु किसी व्यक्ति को निरुद्ध रखने की एक कालावधि होनी चाहिये। इस खण्ड में जिस न्यायिक पुनर्विलोकन को व्यवस्था की गई है वह लिखित आरोपों और उत्तरों के आधार पर ही किया जा सकेगा। कोई गवाह नहीं उपस्थित किये जायेंगे, अभियुक्त की ओर से वकील पैरवी नहीं करेगा और उसे मुकदमा चलाने वालों के गवाहों की परीक्षा करने का अवसर नहीं मिलेगा। इसलिये इसकी भी संभावना है कि मंत्रणा-मंडली गलत फैसला करे। किसी व्यक्ति के निरोध को युक्तियुक्त प्रमाणित करने के लिये सरकार उसके सामने जो सामग्री रखेगी वह, मेरे विचार से, पुलिस के प्रतिवेदन होंगे, और चाहे उसमें कितने ही बुद्धिमान व्यक्ति क्यों न हों किन्तु वे हमेशा ठीक फैसला नहीं कर सकेंगे। इसलिये मेरे विचार से निरुद्ध करने की कालावधि निश्चित कर देनी चाहिये।

अब मैं उस व्यक्ति के मामले को उठाता हूं जो संसद की विधि के अधीन निरुद्ध किया गया हो। हमें बताया गया है कि चूंकि संसद देश की उच्चतम विधान-सभा है, और सारे देश की प्रतिनिधि सभा भी है, इसलिये वह सभी वर्गों के प्रति न्याय करना चाहेगी और उसे इसकी चिंता भी होगी इसलिये कोई कारण नहीं है कि उसके उद्देश्यों पर संदेह किया जाये और संविधान में उसकी शक्ति सीमित कर दी जाये। श्रीमान्, अमरीका में कांग्रेस नाम की एक सभा है, जो उतनी ही उच्चतम सभा है जितनी इस देश में संसद होने जा रही है। किन्तु अमरीका के संविधान में व्यक्तियों को निरुद्ध करने, निवास-स्थानों की तलाशी लेने, आदि के संबंध में इस सभा की शक्तियां सीमित की गई हैं। इसलिये बिना संसद पर किसी प्रकार का आक्षेप किये हुए, अथवा बिना उसके प्राधिकार को किसी प्रकार कम किये हुए अपने संविधान में कुछ संरक्षणों को रख सकते हैं। अथवा अमरीका के संविधान में दिये हुए संरक्षणों से थोड़े बहुत मिलते हुए संरक्षणों को रख सकते हैं। मेरे प्रस्ताव को स्वीकार करने पर भी, अर्थात् इसे स्वीकार करने पर भी कि संसद किसी व्यक्ति को निरुद्ध रखने की कालावधि निश्चित करे, हम अपने संविधान में उन सब प्रत्याभूतियों को नहीं रखेंगे जो अमरीका के संविधान में हैं।

इस समय अमरीका की सरकार जापान के प्रशासन पर नियंत्रण रखे हुए है। वहां एक सैनिक कमांडर को उच्चतम प्राधिकार प्राप्त है। किन्तु जापान में चाहे जो भी असाधारण स्थिति हो, जापानियों को बहुत कुछ वहीं संविधानिक प्रत्याभूतियां दी गई हैं, जो अमरीका के लोगों को अपने संविधान द्वारा प्राप्त हैं। अपना आशय स्पष्ट करने के लिये मैं एक उदाहरण दूंगा, और जापान के संविधान में से एक उपबन्ध पढ़कर सुनाऊंगा। यह उपबन्ध अनुच्छेद 35 में है और उसमें कहा गया है कि:-

> "सभी लोगों को अपने घरों में सुरक्षित रहने तथा उनके कागजातों व सम्पत्ति की तलाशी न होने, उनमें प्रविष्टियां न होने तथा उनके लिये न जाने का अधिकार, है और जब तक किसी सम्भावित कारण के लिये कोई अधिपत्र न निकाला जायेगा, जिसमें उस स्थान का विवरण होगा जिसकी तलाशी ली जायेगी और उन चीजों का विवरण होगा जो ले ली जायेंगी, सिवाय उस दशा के जिसका अनुच्छेद 33 में उल्लेख है।"

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

अनुच्छेद 33 में जिस अपवाद का उल्लेख है वह उस व्यक्ति के संबंध में है जो अपराध करते समय बन्दी किया गया हो।

भारत की स्थिति को यदि शांतिपूर्ण न भी कहा जाये तो कम से कम वह जापान की स्थिति से कहीं अच्छी है। किन्तु जापान में असाधारण स्थिति होते हुए भी वहां के लोगों को स्वतंत्रता की जो प्रत्याभूतियां दी गई हैं उन्हें सभा यहां के लोगों को देने के लिये सहमत नहीं हुई है। यदि विचाराधीन अनुच्छेद पारित हो गया तो केन्द्रीय सरकार तथा प्रान्तीय सरकारों को विशेष विधियां के अधीन लोगों को निरुद्ध करने का अधिकार प्राप्त हो जायेगा। इस विषय के संबंध में हम अमरीका के संविधान के अथवा जापान के संविधान के बहुत पीछे रहेंगे। इस स्थिति में, मेरे विचार से यह आवश्यक है कि हम लोगों को बिना मुकदमा चलाये हुए निरुद्ध करने की कार्यपालिका की शक्ति को सीमित करें ताकि बन्दी अनिश्चित अवधि तक निरुद्ध न रहें। जिन लोगों की स्वतंत्रता का अपहरण किया गया हो उनके लिये हम कम से कम इतना तो कर ही सकते हैं।

श्रीमान्, मैं कह नहीं सकता कि मेरे सुझावों को मसौदा-समिति तथा यह सभा पसंद करेगी या नहीं करेगी। किन्तु मेरे इस संबंध में कुछ भी संदेह नहीं है कि जिन रक्षणों का सुझाव मैंने प्रस्तुत किया है उन्हें, बिना कार्यपालिका की ऐसे आपातों के समय कार्य करने की शक्ति पर प्रभाव डाले हुए, जिनका संविधान में अनुमान भी नहीं किया गया है, रखा जा सकता है। उसे लोगों को बन्दी तथा निरुद्ध करने की शक्ति प्राप्त रहेगी। केवल वह उन्हें अनिश्चित काल के लिये निरुद्ध नहीं रख सकेगी।

यह कहा जा सकता है कि कार्यपालिका जिस व्यक्ति को बहुत ही खतरनाक समझती हो उसे छह मास अथवा एक वर्ष में भी मुक्त करना लोक-हित की दृष्टि से उपयुक्त न हो। इस प्रकार के मामले की कल्पना की जा सकती है। यदि सरकार देखेगी कि कोई मामला इस प्रकार का है तो वह संबंधित व्यक्ति को मुक्त कर देगी और कुछ समय तक उसके आचरण पर नज़र रखेगी और यदि उसका आचरण ठीक नहीं होगा तो उसे कुछ समय के बाद फिर बन्दी कर लेगी। यह कदापि न्यायसंगत नहीं कहा जा सकता कि सरकार भले ही उसे मंत्रणा-मंडली की अनुमति प्राप्त हो, किसी व्यक्ति को महीनों तक ही नहीं बल्कि वर्षों तक निरुद्ध रखे।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बंबई : जनरल): मैं बहुत देर में इस बहस में भाग लेने के लिये उठा हूं और इसलिये मैं अपनी बातें संक्षेप में कहूंगा। जहां तक इस अनुच्छेद के विवरण का संबंध है उस पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श हो चुका है और मैं उन्हीं बातों को फिर नहीं दुहराऊंगा। मैं केवल यह कहना चाहता हूं कि इस उपबन्ध को यथासम्भव उदार बनाना चाहिये। जहां तक इस उपबन्ध के सामान्य स्वरूप का संबंध है मेरा यह निवेदन है कि इसके संबंध में बहुत नहीं कहा जा सकता। यह प्रयास किसी व्यक्ति को आग में से निकालने का प्रयास है और इस पर इसी दृष्टि से विचार भी करना चाहिये। इसी को ध्यान में रखकर

"यथोचित विधि-प्रणाली" शब्दों को नहीं रखा गया है। अनुच्छेद 15 में सबसे अधिक महत्वपूर्ण मूलाधिकारों का अर्थात् जीवन तथा दैहिक स्वातंत्र्य का वर्णन है। हममें से वे लोग जो उस पदावली को रखना चाहते थे उस अधिकार को मूलाधिकार बनाना चाहते थे। आखिर मूलाधिकार का सार क्या है? सभ्य मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं को देखते हुए विधान-मंडल की सर्वसत्ता को सीमित करना और उसी अंश में न्यायपालिका की सर्वसत्ता को भी सीमित करना ही मूलाधिकार का सार है। दुर्भाग्य से हमारी पराजय हुई। इस उपबन्ध में उस सर्वसत्ता को स्थापित करने का प्रयास नहीं किया गया है। डॉ. अम्बेडकर ने ठीक ही कहा है कि अनुच्छेद 15 से किसी व्यक्ति को उन परिस्थितियों में बन्दी करने का पूर्ण अधिकार मिल जाता है जिन्हें संसद उचित समझे। यह अधिकार पहले से वर्तमान ही था और यह नहीं कहा गया है कि इस अनुच्छेद से अधिकार सीमित हो जाता है। डॉ. अम्बेडकर का यह विचार है कि इन उपबन्धों के फलस्वरूप अवैध तथा मनमाने ढंग से किसी को बन्दी नहीं किया जा सकेगा। किन्तु क्या इनके फलस्वरूप संसद भी निवारक निरोध के संबंध में कोई उपबन्ध नहीं बना सकेगी? वास्तव में कसौटी यही है। मेरा निवेदन है कि यह रक्षण तो बहुत साधारण रक्षण है। अनुच्छेद के खण्ड (1) और (2) द्वारा कोई नवीन अधिकार प्रदान नहीं किये गये हैं। ये अधिकार पहले से ही प्राप्त हैं। केवल अब इनका निराकरण करने में बहुत कठिनाई होगी। तीसरी बात मंत्रणा-मंडली के संबंध में है। ये बहुत ही साधारण रक्षण हैं और हम यह कह सकते हैं कि बहुत सी दया दिखाई गई है। वे जैसे भी हैं उन्हें मैं स्वीकार करता हूं किन्तु उन्हें स्वीकार करने में उनका वास्तविक स्वरूप समझ लेना चाहिये।

मैं डॉ. अम्बेडकर को अथवा मसौदा-समिति को दोष नहीं देता हूं। हम सभी के सामने इस संबंध में दो कठिनाइयां हैं। एक कठिनाई यह है कि बहुत से उपबन्ध यहां अनेक विचारधाराओं तथा मतों के लोगों के बीच विचार-विमर्श होने अथवा बातचीत होने के पश्चात् उपस्थित किये जाते हैं। प्रायः यही कहा जाता है कि यह एक सुगठित प्रस्ताव है और हमें या तो इसे पूरा स्वीकार करना है या पूरा अस्वीकार करना हैं समझौते के लिये हमें यह मूल्य चुकाना होता है। इसलिये मुझे इस पर आपत्ति नहीं है। किन्तु हमारे सामने जो दूसरी कठिनाई है वह इससे बड़ी है। इस प्रकार के अवसरों पर हममें से अधिकांश लोग पहले हम जिन सिद्धान्तों को बड़े जोरों से घोषित करते रहे हैं उनके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करने लगते हैं। किन्तु देश में प्राधिकार तथा उत्तरदायित्व की जगह पर हमारे अन्य मित्र भी हैं जो हमें चेतावनी देते हैं कि युद्ध तथा देश विभाजन के फलस्वरूप ऐसी शक्तियां उत्पन्न हो गई हैं कि यदि उन्हें प्रबल होने दिया गया तो अराजकता फैल जायेगी और देश विनाश के गर्त में पड़ जायेगा। इस कारण वे यह कहते हैं कि संसद को ऐसी विधियां बनानी चाहियें जिनसे कार्यपालिका को इन हिंसात्मक तथा विध्वंसक शक्तियों को दबाने के लिये अधिकार पैदा हो जाये। कार्यपालिका में हमारे जो नेता हैं, वे बड़े देशभक्त हैं और उन पर हमारा विश्वास है। हम में से कई लोगों को यह विश्वास नहीं हो पाया है कि "यथोचित विधि प्रणाली" पदावली को रखने का परिणाम अवश्य ही बहुत बुरा होगा, किन्तु कठिनाई यह है कि यदि हमें अपनी भी दोषसिद्धि करनी हो तो ऐसे मामलों में प्रयोग नहीं किया जा सकता। मराठी में एक कहावत है जिसका मतलब यह है कि यह

[श्री बी.एम. गुप्ते]

जानने के लिये कि कोई चीज विष है या विष नहीं है उसे निगलना न चाहिये क्योंकि यदि वह विष हुआ तो जो उसे निगलेगा वह मर ही जायेगा। इसलिये इस प्रकार के मामलों में प्रयोग नहीं किया जा सकता। इस संबंध में हमारे नेताओं ने हमें जो चेतावनी दी है उसकी ओर हमें ध्यान देना चाहिये।

इसका यह अर्थ नहीं है कि ये उपबन्ध अधिक उदार नहीं बनाये जा सकते। डॉ. अम्बेडकर ने भी यह कहा है कि इन उपबन्धों को अधिक विस्तृत किया जा सकता है और इनमें कुछ और रक्षण रखे जा सकते हैं। किन्तु उसे बनाने में हमें अन्ततोगत्वा अपने नेताओं की चेतावनी की ओर ध्यान देना ही चाहिये। उस दशा में हमारा रुख क्या होना चाहिये। कम से कम मैं यह बता देना चाहता हूं कि मेरा रुख क्या है। मेरा रुख उपेक्षा का रुख है। ये साधारण रक्षण हैं। इनका जो मूल्य है उसी के अनुसार इन्हें आंकना चाहिये। पंडित भार्गव तथा श्री बख्शी टेकचन्द ने जिस जोश से इनका विरोध कियाा है उतना जोश मैं नहीं दिखाना चाहता क्योंकि इनके कारण कोई हानि नहीं हो सकती। साथ ही उनका जो विरोध किया जा रहा है उसे देखते हुए मसौदा-समिति यदि उन्हें वापस भी ले ले तो इसके लिये भी आंसू बहाने की आवश्यकता नहीं है।

***श्रीमती जी. दुर्गाबाई** (मद्रास : जनरल): अध्यक्ष महोदय, डॉ. अम्बेडकर ने जिस नवीन अनुच्छेद 15-क को उपस्थित किया है उसका समर्थन करते हुए मैं विचाराधीन विषय के संबंध में कुछ बातें कहना चाहती हूं। मैं यह जानती हूं कि इस विषय पर बोलने के लिये आगे बढ़कर मैं सभा का धैर्य तोड़ने जा रही हूं। किन्तु इस बहस के सिलसिले में जो कुछ कहा गया है उसके संबंध में, मेरे विचार से, मुझे अवश्य ही कुछ बातें कहनी चाहिये।

मैंने उन माननीय सदस्यों के भाषण सुने हैं जिन्होंने वैयक्तिक स्वातंत्र्य का बड़े जोश के साथ समर्थन किया है और उसे राज्य की आवश्यकताओं से भी अधिक महत्व दिया है तथा यह कहा है कि यह अनुच्छेद हमारी असफलताओं का सिरमौर है। श्रीमान्, हमारे सामने यह प्रश्न है कि वैयक्तिक स्वातंत्र्य अधिक महत्वपूर्ण है या राज्य का अस्तित्व। जब राज्य की जड़ों पर ही कुठाराघात होने जा रहा हो, और वह भी उस राज्य की जड़ों पर जो एक व्यक्ति के नहीं बल्कि सभी व्यक्तियों के स्वातंत्र्य के लिये कटिबद्ध है तो मैं तो राज्य के अस्तित्व को अधिक महत्व दूंगी। मैं यह इसलिये कह रही हूं कि मैं यह जानती हूं कि अपने वैयक्तिक स्वातंत्र्य के लिये मेरा जो जोश है वह केवल अपने स्वार्थ की सुरक्षा के लिये ही है। मेरे स्वार्थ से राज्य का महत्व कहीं अधिक है क्योंकि उसे मुझ जैसे कई व्यक्तियों के स्वातंत्र्य की चिंता होती है। मेरे विचार से इस शताब्दी में वैयक्तिक स्वातंत्र्य के सबसे बड़े समर्थक डि वेलरा हुए हैं और उनकी लोकतंत्रात्मक परम्परा सर्वोत्कृष्ट रही है। उन्होंने क्या किया है? प्रेजीडेंट होने के पश्चात् उन्होंने सबसे पहले कई लोक सुरक्षा अधिनियमों को पारित किया। इसके अलावा उनके लिये कोई चारा ही नहीं था। उन्हें यह करना पड़ा क्योंकि एक ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो गई जब उनकी ही हत्या होने जा रही थी। वे और करते ही क्या?

यहां मेरे मित्रों ने बन्दी तथा निरुद्ध करने के संबंध में जो शक्ति दी जा रही है उसकी आलोचना की है। किन्तु उन्होंने इस पर विचार नहीं किया कि यह शक्ति कब और किस स्थिति में प्रयोग की जायगी। यह शक्ति तभी प्रयोग की जायेगी जब कोई व्यक्ति समवर्ती सूची में उल्लिखित लोक-व्यवस्था में अथवा देश की प्रतिरक्षा-सेवाओं में हस्तक्षेप करेगा। मैं आपसे अनुरोध करती हूं कि आप मेरे प्रदेश अर्थात् मद्रास, मालावार, विजयवाड़ा जायें। मैं आपको बताना चाहती हूं और इस ओर आपको ध्यान आकृष्ट करना चाहती हूं कि वहां कोई भी स्त्री और कोई भी माता सुरक्षा का अनुभव नहीं कर रही है। वे नहीं जानती कि उनके पति घर आवेंगे अथवा घर आवेंगे भी या नहीं। वहां ऐसी स्थिति है। पुरुष भी जब बाहर जाते हैं तो उन्हें विश्वास नहीं रहता कि घर में उनकी पत्नियां तथा लड़कियां सुरक्षित रहेंगी या नहीं। स्थिति यह है। इस स्थिति में राज्य क्या करे? अब उन लोगों को कुछ सुरक्षा का आश्वासन देने के लिये सरकार क्या करे? स्थिति इस प्रकार की होगी तभी सरकार लोगों को बन्दी करेगी तथा उन्हें निरुद्ध करेगी।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत इस नवीन अनुच्छेद 15-क में बहुत ही सुन्दर मध्य मार्ग का अनुसरण किया गया है। जरा 1919 के विनियम पर तो विचार कीजिये, जिसमें कोई भी कालावधि नहीं रखी गई थी। उसके पश्चात् विभिन्न प्रान्तों में लोक सुरक्षा अधिनियम व्यवहार में लाये गये। इस अनुच्छेद में एक मंडली की व्यवस्था की गई है। इस प्रकार के मामलों पर वह मंडली विचार करेगी। इसके अतिरिक्त किसी भी दशा में किसी व्यक्ति को तीन मास से अधिक काल तक निरुद्ध नहीं रखा जा सकेगा और यदि इससे अधिक काल तक निरुद्ध रखने की आवश्यकता होगी तो उसके संबंध में मंडली अपना प्रतिवेदन देगी। कार्यपालिका जिन कागजात को अथवा जिस अभ्यावेदन को उपस्थित करेगी उस पर न्यायालय बहुत सावधानी से विचार करेगा। इस शक्ति पर जो परिसीमन तथा निर्बन्धन लगाये गये हैं उनकी डॉ. अम्बेडकर बड़ी योग्यता के साथ व्याख्या कर चुके हैं और उसे दुहरा कर मैं सभा का समय नष्ट नहीं करना चाहती। एक बात ध्यान देने योग्य यह है कि किसी भी दशा में किसी व्यक्ति को तीन मास से अधिक समय के लिये निरुद्ध नहीं रखा जा सकेगा। यदि तीन मास से अधिक काल के लिये निरुद्ध रखने की आवश्यकता हुई तो मंडली इस संबंध में अपना प्रतिवेदन देगी और उसके आधार पर ही अधिक काल के लिये निरुद्ध रखा जा सकेगा। इसके अतिरिक्त संसद इस संबंध में विधि बनायेगी और उसमें इसका विवरण देगी कि किन मामलों में यह कालावधि बढ़ाई जा सकती है। इस शक्ति को सीमित करने के लिये ये निर्बन्धन रखे गये हैं।

श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने जो विभिन्न संशोधन उपस्थित किये हैं उन्हें मैं नहीं उठाना चाहती। उन्होंने कहा है कि कम से कम एक बार अपील करने का अधिकार होना चाहिये और समय-समय पर पुनर्विलोकन और प्रतिबन्धों के साथ मुक्त करने के संबंध में उपबन्ध होने चाहियें। इन प्रश्नों का उत्तर डॉ. अम्बेडकर देंगे। मैं केवल उन एक-दो प्रश्नों का उत्तर दूंगी जिन्हें श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी ने अपने संशोधनों में उठाया है। मैं यह कहूंगी कि मुझे उनके दो संशोधनों से बहुत सहानुभूति है। उनमें से एक में यह उपबन्धित है कि निरुद्ध व्यक्ति मंडली की कारण बताने तथा सफाई देने के लिये स्वयं उपस्थित हो। मेरे विचार से मसौदा-समिति को इसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं

[श्रीमती जी. दुर्गाबाई]

होनी चाहिये। आखिर यदि कोई निरुद्ध व्यक्ति मंडली के सामने आकर अपनी सफाई देगा तो इसमें उसका क्या बिगड़ जायेगा। मैं कह नहीं सकती कि इस संबंध में कोई प्रशासन संबंधी कठिनाई तो उत्पन्न नहीं होगी। इस पर मसौदा-समिति विचार करेगी। मुझे तो सरकार पर विश्वास है। क्या वैयक्तिक स्वातंत्र्य की समर्थक हमारी सरकार, हमारे प्रधान मंत्री, हमारे उप-प्रधान मंत्री से भी बड़े और कोई हो सकते हैं जो हमेशा गरीबों तथा पीड़ितों की सहायता करते रहते हैं?

श्रीमती पूर्णिमा बैनर्जी के एक अन्य संशोधन का उद्देश्य यह है कि जो लोग निरुद्ध किये जायें उनके आश्रितों का भरण-पोषण सरकार करे। उनके इस संशोधन से भी मुझे सहानुभूति है क्योंकि यदि कोई रोटी कमाने वाला निरुद्ध किया जाता है तो उसके आश्रितों के भरण-पोषण के लिये प्रबन्ध किया ही जाना चाहिये। इस मामले को कार्यपालिका की स्वेच्छा पर न छोड़कर इस संबंध में किसी प्रकार की प्रत्याभूति देना उचित होगा। किन्तु यह व्यवहार में किस प्रकार सम्भव हो सकेगा? प्रश्न यह है। हमारे देश में बहुत लोग गरीब हैं। वे यह कहना चाहती हैं कि पचास प्रतिशत मामलों में लोग छुट जायेंगे। वे यह भी कहती हैं कि इन मामलों में लोग संदेह से अभियुक्त को ही लाभ होना चाहिये। क्या उसके आश्रित अनिश्चितकाल तक कष्ट सहन करते रहेंगे? वे यह प्रश्न पूछती हैं। किन्तु मेरा निवेदन है कि इस प्रकार के मामलों में प्रान्तीय सरकारें विचार करती आई हैं और जिनको सहायता की आवश्यकता समझी गई है उन्हें सहायता दी जाती रही है। यह तर्क भी उपस्थित किया जा सकता है कि इससे अपराधियों को प्रोत्साहन मिलेगा। यदि उन्हें यह भरोसा हो जायेगा कि उनके परिवार का भरण-पोषण होगा तो वे अपराध करते रहेंगे और राज्य के आधार पर ही आघात करते रहेंगे। मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि इस प्रश्न को प्रान्तीय सरकारों के निर्णय के लिये छोड़ दिया जाये। अथवा जो भी सरकारें इन मामलों के संबंध में निर्णय करें वे इस प्रश्न को हल करें।

इसके अतिरिक्त, श्रीमान्, मेरे विचार से अनुच्छेद 15-क (1) में प्रयुक्त "विधि व्यवसायी" शब्दों की कुछ व्याख्या करने की आवश्यकता है। हम जानते हैं कि कासिम रिजवी ने इंग्लिस्तान के एक वकील को रखा था किन्तु उसे पैरवी करने की आज्ञा नहीं दी गई थी। क्या अभियुक्त को इसकी स्वतंत्रता होनी चाहिये कि वह जहां कहीं से जिस वकील को चाहे रखे। यदि इस संबंध में नियम हैं तो मुझे कुछ आपत्ति नहीं है। अन्यथा मेरा यह सुझाव है कि "विधि-व्यवसायी" शब्दों के पश्चात् "जो इन मामलों में पैरवी करने की अर्हता रखता हो और इसके लिये अधिकृत हो" शब्द रखे जायें।

श्रीमान्, मैं सभा से सिफारिश करती हूं कि यह अनुच्छेद स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद के संबंध में जो आलोचनायें की गई हैं उनके निराकरण के लिये डॉ. अम्बेडकर कुछ सुझाव रखना चाहते हैं।

इसलिये मैं उन्हें इस समय बोलने का अवसर देता हूं। यदि कोई और प्रश्न उठाया गया तो उस पर बाद में विचार किया जा सकता है।

***बाबू रामनारायण सिंह** (बिहार : जनरल): क्या वे अनुच्छेद को निकाल देने के लिये सहमत नहीं हैं?

***अध्यक्ष:** जी नहीं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं वास्तव में नहीं समझता था कि इस अनुच्छेद 15-क पर विचार-विमर्श करने में सभा का इतना समय लगेगा। जैसाकि मैं कह चुका हूं, मैं तथा मसौदा-समिति के अधिकांश सदस्य तथा जनसाधारण में से भी कई लोगों की यह धारणा है कि अनुच्छेद 15 की भाषा को देखते हुए अर्थात् इन शब्दों को देखते हुए कि विधि द्वारा निर्धारित प्रणाली के अधीन ही कोई व्यक्ति बन्दी किया जाना चाहिये, हमने वैयक्तिक स्वतंत्रता की सुरक्षा की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया है। जबसे यह अनुच्छेद स्वीकार किया गया है, मैं और मेरे मित्र बिना "यथोचित विधि-प्रणाली" शब्दों को प्रयोग किये हुए उसकी आधारभूत सभी कार्यवाहियों को उपबंधित करने का प्रयास करते रहे हैं। मैंने यह समझा था कि जो सदस्य वैयक्तिक स्वातंत्र्य में दिलचस्पी रखते हैं वे अनुच्छेद 15-क के उपबन्धों को देखकर संतुष्ट हो जायेंगे और वे इस अनुच्छेद को प्रसन्नता से स्वीकार कर लेंगे। किन्तु मुझे खेद है कि जिन लोगों ने इस बहस में इस अनुच्छेद की आलोचना ही नहीं बल्कि विरोध भी किया है उन्होंने यह भावना नहीं प्रदर्शित की है। वास्तव में अपने स्वातंत्र्य प्रेम के कारण उन्होंने मुझसे यहां तक कहा कि इस अनुच्छेद को ही निकाल देना चाहिये।

श्रीमान्, मैं उन लोगों की सलाह स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूं क्योंकि मुझे इस संबंध में कुछ भी सन्देह नहीं है कि यह मार्ग बुद्धिमत्ता का मार्ग नहीं है। इसलिये मैं अनुच्छेद 15-क का परित्याग नहीं कर सकता। मैं यह मानता हूं कि कई आलोचकों ने कुछ ऐसे तर्क उपस्थित किये हैं जिन पर सहानुभूति से विचार करने की आवश्यकता है और मैं उन पर अवश्य ही विचार करूंगा। तथा कुछ संशोधनों को भी उपस्थित करूंगा, जिनसे मेरे विचार से, जो आपत्ति की गई है वह दूर हो जायेगी, विशेषतया इसलिये कि अनुच्छेद 15-क के मसौदे से कुछ आधारभूत बातें ही निकाल दी गई हैं। इन आलोचनाओं का उत्तर देते हुए मैं इस अनुच्छेद के सामान्य भाग को विशेष भाग से पृथक् करना चाहता हूं जिसमें निवारक निरोध का वर्णन है। मैं निवारक निरोध विषयक अंश को पृथक् रूप से उठाऊंगा।

अब अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) के संबंध में तीन सुझाव प्रस्तुत किये गये हैं। एक सुझाव "यथाशक्य शीघ्र" शब्दों के संबंध में है। सदस्यों ने जो संशोधन उपस्थित किये हैं उनमें से कुछ का उद्देश्य यह है कि ये शब्द निकाल दिये जायें और इनके स्थान पर "पन्द्रह दिन" और कुछ स्थानों पर "सात दिन" शब्द रखे जायें। मेरे विचार से इन संशोधनों के प्रस्तावक नहीं समझ पाये हैं कि इस

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

प्रसंग में "यथाशक्य शीघ्र" शब्दों का अर्थ क्या है। ये शब्द खण्ड (2) से सुसम्बद्ध हैं और बिना खण्ड (2) के उपबन्धों को ध्यान में रखे हुए इनका आशय स्पष्ट नहीं हो सकता। उसमें यह निश्चित रूप से कहा गया है कि बन्दी किया हुआ कोई भी व्यक्ति हवालात में 24 घंटे से अधिक समय के लिये तब तक निरुद्ध न रखा जा सकेगा जब तक 24 घंटे की समाप्ति तक बन्दी अथवा निरुद्ध करने वाले पुलिस के अधिकारी को, दंडाधिकारी को इसके लिये प्राधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। इस धारा का यही निर्वचन करना चाहिये। यह स्पष्ट है कि जब 24 घंटे से अधिक समय के लिये निरुद्ध रखने के लिये पुलिस के अधिकारी को एक दंडाधिकारी के न्यायिक प्राधिकार की आवश्यकता होगी तो उसे उस दंडाधिकारी को अवश्य ही उस आरोप की सूचना देनी होगी जिसके आधार पर वह व्यक्ति निरुद्ध किया गया है। इसका यह अर्थ है कि "यथाशक्य शीघ्र" पदावली का अर्थ 24 घंटे से अधिक समय नहीं लगाया जा सकता। इसलिये जिन संशोधनों में 15 दिन अथवा सात दिन का सुझाव रखा गया है उनसे वास्तव में वैयक्तिक स्वातंत्र्य सीमित होता है। इसलिये मेरे विचार से ये सभी संशोधन अप्रासंगिक हैं और इनकी आवश्यकता नहीं है।

दूसरा प्रश्न यह उठाया गया है कि हमने अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) में अभियुक्त को अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी से परामर्श करने का अधिकार तो दिया है किन्तु हमने इस संबंध में कोई उपबन्ध नहीं रखा है कि वह विधि-व्यवसायी द्वारा अपनी प्रतिरक्षा करवा सकता है। दूसरे शब्दों में परामर्श करने के अधिकार और प्रतिरक्षा करवाने के अधिकार में भेद किया गया है। मेरा अपना यह विचार था कि "परामर्श करने" शब्दों में प्रतिरक्षा करवाने का अधिकार भी सन्निहित है क्योंकि यदि प्रतिरक्षा करवाने के लिये परामर्श नहीं किया गया तो वह परामर्श निरर्थक है। किन्तु किसी प्रकार का भ्रम न रहने देने के लिये और इस तर्क के लिये भी गुंजाइश न रहने देने के लिये कि "परामर्श करना" शब्द सीमित अर्थ में प्रयुक्त हैं, मैं "किसी विधि-व्यवसायी से परामर्श करने" शब्दों के पश्चात् तथा "प्रतिरक्षा कराने" शब्दों को जोड़ने के लिये तैयार हूं ताकि परामर्श करने तथा प्रतिरक्षा कराने का भी अधिकार प्राप्त हो जाये। अन्त में बोलने वाले वक्ता महोदय ने यह पूछा है कि "अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी" शब्दों का क्या अर्थ है। "अपनी रुचि के शब्दों का महत्व और उन्हें जान बूझ कर रखा गया है क्योंकि हम यह नहीं चाहते कि तत्कालीन सरकार किसी अभियुक्त पर एक ऐसे वकील को थोप दे जिसे वह उस मुकदमे में रखना चाहें क्योंकि हो सकता है कि अभियुक्त का उस पर विश्वास न हो। इसी कारण हमने "अपनी रुचि के" शब्दों को रखा है। किन्तु "अपनी रुचि के" शब्दों के साथ "विधि-व्यवसायी" शब्द भी हैं। "विधि-व्यवसायी" पदावली का वही अर्थ है जो हम साधारणतया समझते हैं। अर्थात् एक ऐसा विधि-व्यवसायी जिसे उच्च न्यायालय अथवा संबंधित न्यायालय के नियमों के अधीन व्यवसाय करने का अधिकार है।

अब, श्रीमान्, मैं खण्ड (2) को उठाऊंगा। इस संबंध में मेरे मित्र पातस्कर ने जो सुझाव रखा वही मुख्य सुझाव है। जहां तक मैं उनका आशय समझ पाया हूं, वे "दंडाधिकारी" शब्द के स्थान पर "पहली श्रेणी के दंडाधिकारी" शब्द रखना

चाहते हैं। इन शब्दों को स्वीकार करने में मुझे दो कारणों से कठिनाई हो रही है। खण्ड (2) में हमने बहुत महत्वपूर्ण शब्दों को अर्थात् "निकटतम दंडाधिकारी" शब्दों को प्रयोग किया है। मैंने यह विचार किया कि इन शब्दों को रखना बहुत आवश्यक है क्योंकि अन्यथा पुलिस का कोई अधिकारी यह कह कर किसी व्यक्ति को अधिक काल तक निरुद्ध रख सकेगा कि जिस दंडाधिकारी के पास वह अभियुक्त को ले जाना चाहता था अथवा वह दंडाधिकारी जो अन्त मे उसके मुकदमे का फैसला करेगा वह दूरी पर रहता है। हमने "निकटतम दंडाधिकारी" शब्द इसी कारण रखे हैं कि यह तर्क उपस्थित न किया जा सके। अब यदि हम "पहली श्रेणी के निकटतम दंडाधिकारी" शब्द रखें तो बड़ी कठिनाई पैदा हो जायेगी। हो सकता है कि "निकटतम दंडाधिकारी" तो हो जिसके सामने पुलिस अभियुक्त के मामले को रख सकती है ताकि उस पर न्याययुक्त ढंग से विचार किया जा सके किन्तु सम्भव है वह पहली श्रेणी का दंडाधिकारी न हो। इसलिये हमें इस संबंध में निर्णय करना है कि हम अभियुक्त को यथाशीघ्र इसका अवसर देना चाहते हैं कि वह पास के किसी दंडाधिकारी से अपने मामले के संबंध में फैसला करवा ले अथवा क्या हम पहली श्रेणी के दंडाधिकारी की खोज में रहेंगे। मेरे विचार से, अभियुक्त के स्वातंत्र्य की दृष्टि से "निकटतम दंडाधिकारी" शब्द बहुत उपयुक्त है। मैं अपने मित्र श्री पातस्कर को यह भी बताना चाहता हूं कि यदि मैं उनके संशोधन को स्वीकार भी कर लूं और "पहली श्रेणी के निकटतम दंडाधिकारी" शब्दों को रख दूं, तब भी कोई भी सरकार अपराध प्रक्रिया संहिता को संशोधित करके जिस दंडाधिकारी को चाहेगी प्रथम श्रेणी के दंडाधिकारी की शक्तियां प्रदान कर देगी और अभियुक्त को धोखा देगी। इसलिये मेरे विचार से इस संशोधन को स्वीकार करना न तो उचित ही है और न आवश्यक ही। मैं इसे स्वीकार नहीं कर सकता।

अनुच्छेद 15-क में यही सामान्य उपबन्ध है और मुझे विश्वास है....

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** कृपया इस पर विचार कीजिये कि.....

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मेरे मित्र पंडित ठाकुर दास भार्गव ने परीक्षा के अधिकार का प्रश्न उठाया है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** उल्लिखित कारणों के आधार पर।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मेरे विचार से वह उपबन्ध एक उपयुक्त उपबन्ध है। मेरे विचार से अपराध प्रक्रिया संहिता की कई धाराओं में यह उपबंधित है कि दंडाधिकारी अवश्य ही कारणों का उल्लेख करें क्योंकि इस स्थिति में उच्च न्यायालय भी इस पर विचार कर सकता है कि दंडाधिकारी ने स्वविवेक को न्यायपूर्ण ढंग से प्रयोग किया है या नहीं किया है। मैं यह स्वीकार करता हूं कि यह एक बहुत ही उपयुक्त उपबन्ध है किन्तु मैं अपने मित्र से अनुरोध करूंगा कि वे इस पर विचार करें कि किसी ऐसे मामले में, जिसमें अधिक काल के लिये निरुद्ध रखने का प्रश्न उठे, क्या दंडाधिकारी को यह प्राधिकार प्राप्त नहीं होगा कि पुलिस ने अभियुक्त पर जो आरोप लगाया है वह प्रत्यक्षतः आधार-सहित है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** इस समय भी धारा 167 (3) में उसी प्रकार के शब्द हैं। इस समय जिस दंडाधिकारी के पास अभियुक्त ले जाया जाता है, उसका यदि यह विचार हो कि उसे अधिक काल तक निरुद्ध रखने की आवश्यकता है तो वह अवश्य ही यह लिखता है कि वह अमुक कारणों से अधिक काल के लिये निरुद्ध किया जा रहा है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह सच है। इस प्रकार के शब्द हैं। किन्तु क्या इनकी आवश्यकता है?

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** इनकी बहुत आवश्यकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं तो समझता हूं कि उनकी आवश्यकता नहीं है। मैं एक सबसे खराब मामले का उदाहरण दूंगा। सम्भव है कोई दंडाधिकारी पुलिस को प्रसन्न करने के लिये किसी अभियुक्त को बार-बार हिरासत में निरुद्ध रखने की आज्ञा देता जाये। तो क्या इस दशा में अभियुक्त कोई उपचार नहीं कर सकेगा? मेरे विचार से अभियुक्त इस उपचार का आश्रय ले सकता है कि वह उच्च न्यायालय के सामने अपने मामले पर पुनर्विचार कराने के लिये जाये और वहां यह कहे कि न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग किया जा रहा है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** एक गरीब आदमी उच्च न्यायालय के सामने कैसे जायेगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं यह नहीं कहना चाहता कि अब मैं इस प्रश्न पर विचार ही नहीं करूंगा। यदि आवश्यकता होगी तो बाद में मसौदा-समिति इस पर विचार कर सकती है कि इन शब्दों की आवश्यकता है या नहीं। हमें इस समय यही सलाह दी गई है और हमारा भी यही विचार है कि इन शब्दों की इस समय आवश्यकता नहीं है।

अब मैं अनुच्छेद 15(3) के दूसरे भाग को उठाता हूं जो निवारक निरोध के संबंध में है। मेरे मित्र श्री त्यागी को अनुच्छेद के इस अंश पर बहुत क्रोध आया है। मैं अपने मित्र श्री त्यागी को इस कारण क्षमा करता हूं कि वे वकील नहीं हैं और वे नहीं जानते कि क्या हो रहा है। जब कोई ऐसा प्रश्न उठता है, जो साधारण लोगों की समझ में आ सकता है, तो वे एकाएक जाग उठते हैं। यद्यपि वे नहीं जानते कि प्रश्न क्या है। वास्तव में जिस प्रश्न से वे जाग उठते हैं वह एक आनुषंगिक प्रश्न होता है। किन्तु इस सभा के वकील सदस्यों ने जो रुख अपनाया है उसके लिये मैं उन्हें क्षमा नहीं कर सकता।

हम क्या कर रहे हैं? मैं सभा को बताऊंगा कि इस समय हम क्या कर रहे हैं। हमारे सामने सप्तम अनुसूची की तीन सूचियां थीं। इन सूचियों में

निवारक-निरोध के संबंध में दो प्रविष्टियां थीं, एक प्रविष्टि सूची एक में थी और दूसरी प्रविष्टि सूची 3 में थी। यदि हम थोड़ी देर के लिये यह मानें कि निवारक-निरोध-संबंधी यह अंश निकाल दिया जाता है तो उसका क्या प्रभाव होगा? उसका प्रभाव यह होगा कि प्रान्तीय विधान-मंडलों को तथा केन्द्रीय विधान-मंडल को निवारक-निरोध के संबंध में अपनी इच्छानुसार विधि बनाने की स्वतंत्रता प्राप्त हो जायेगी। यदि इस संविधान के किसी अनुच्छेद में किसी ऐसी विधि बनाने के संबंध में परिसीमन नहीं रखा गया, जिसे बनाने का अधिकार हमने इस समय केन्द्र और प्रान्तों को दिया है, तो संसद तथा राज्यों के विधान-मंडलों को निवारक-निरोध के संबंध में विधि बनाने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त हो जायेगी। क्या सभा के वकील सदस्य यह चाहते है कि राज्यों के विधान-मंडलों तथा संसद को इस प्रकार की स्वतंत्रता दी जाये। मेरा निवेदन है कि यदि उनका वही रुख है जो उन्होंने आज व्यक्त किया है तो उन्हें सूची 1 तथा सूची 3 की तत्संबंधी प्रविष्टियों का विरोध करना चाहिये था। हम इस अधिकार को परिसीमित करने का प्रयास कर रहे हैं। हमने राज्य के विधान-मंडलों तथा संसद को निवारक-निरोध के संबंध में विधि बनाने की शक्ति प्रदान की है। मैं परिसीमन रख कर उस शक्ति को केवल कम करना चाहता हूं। मैं उसे खराब नहीं कर रहा हूं। आपने उसे खराब किया है।

जहां तक दूसरे भाग के उपबन्धों का संबंध है मैं पहले.....

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** उन सूचियों को किसने बनाया है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैंने बनाया, किन्तु आपने उन्हें पारित किया! ये परिसीमन मेरे ध्यान में थे। अब मैं खण्ड 3 (ख) के परन्तुक को उठाता हूं।

***श्री महावीर त्यागीः** क्या आप यह समझने में साधारण लोगों की सहायता करेंगे कि आपने खण्ड (4) के अधीन मंत्रणा-मंडली द्वारा मामलों पर पुनर्विचार करने के संबंध में उपबन्ध क्यों नहीं रखे हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं सभा में सदस्य महोदय के लाभार्थ विधि-विषेयक बातें स्पष्ट नहीं कर सकता। यह सभा कोई विधि की कक्षा नहीं है। मैं इस समय इस प्रकार की व्याख्या नहीं कर सकता। माननीय सदस्य महोदय मेरे मित्र हैं। यदि वे नहीं समझते हैं तो वे मेरे पास बाद में आ सकते हैं।

अब मैं परन्तुक को उठाता हूं जिसके संबंध में दो प्रकार की आलोचनायें की गई हैं। एक आलोचना यह है कि निवारक-निरोध-विषेयक विधि के अधीन नहीं बल्कि साधारण विधि के अधीन जो व्यक्ति बन्दी अथवा निरुद्ध किये जायेंगे उनके संबंध में हमने अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) में यह उपबन्ध रखा है कि अभियुक्त को सूचित किया जायेगा कि वह किन कारणों से बन्दी किया जायेगा। मैं बता चुका हूं कि निवारक-निरोध के संबंध में हमने इस प्रकार का उपबन्ध नहीं रखा है। मेरे विचार से यह आलोचना ठीक ही है। मैं स्थिति में सुधार करने के लिये तैयार हूं क्योंकि मैं देखता हूं कि निवारक-निरोध के संबंध में प्रान्तीय सरकारों ने जो विधियां बनाई हैं उनके अधीन भी यह उपबन्ध रखा गया है कि

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

जो व्यक्ति निरुद्ध किया जायेगा उसे बताया जायेगा कि उसे किन कारणों से निरुद्ध किया गया है। मेरा अपना यह विचार है कि जब उन प्रान्तों ने, जो निवारक-निरोध-सम्बन्धी विधियां बनाने के लिये चिंतित हैं, इस उपबन्ध को रखा है तो संविधान में यह क्यों न रखा जाये। इसलिये मैं अनुच्छेद 15-क में खण्ड (3) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड समाविष्ट करने के लिये तैयार हूं:

"(3) निवारक-निरोध उपबंधित करने वाली किसी विधि के अधीन दिये गये आदेश के अनुसरण में जब कोई व्यक्ति निरुद्ध किया जाता है तब आदेश देने वाला प्राधिकारी.....

***बाबू रामनारायण सिंह:** श्रीमान्, डॉ. अम्बेडकर कहते हैं कि प्रान्त यह चाहते हैं कि यह खण्ड रखा जाये

***अध्यक्ष:** उन्होंने इस प्रकार की कोई बात नहीं कही है। उन्होंने यह कहा है कि प्रान्तों द्वारा पारित निवारण-निरोध-संबंधी अनेक अधिनियमों में इस प्रकार के कुछ उपबन्ध हैं। वे इस अनुच्छेद में भी इसी प्रकार का एक उपबन्ध रखना चाहते हैं।

***बाबू रामनारायण सिंह:** मैं जानना चाहता हूं कि क्या हम प्रान्तों के निर्देश से विधि बना रहे हैं।

***अध्यक्ष:** इस प्रकार की कोई बात नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं देखता हूं कि श्री रामनारायण सिंह को अपनी प्रान्तीय सरकार से कुछ चिढ़ है।

मैं कह रहा था कि इस उपबन्ध से हमारा उद्देश्य पूरा हो जायेगा:

"अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के पश्चात् निम्नलिखित खण्ड रखा जाये:

'(3क) निवारक-निरोध उपबंधित करने वाली किसी विधि के अधीन दिये गये आदेश के अनुसरण में जब कोई व्यक्ति निरुद्ध किया जाता है तब आदेश देने वाला प्राधिकारी यथाशक्य शीघ्र उस व्यक्ति को जिन आधारों पर वह आदेश दिया गया है उनको बतायेगा तथा उस आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने के लिये उसे शीघ्रातिशीघ्र अवसर देगा। (ख) इस अनुच्छेद के खण्ड (3क) की किसी बात से आदेश देने वाले प्राधिकारी के लिये ऐसे तथ्य को प्रकट करना आवश्यक नहीं होगा जिनका कि प्रकट करना ऐसा प्राधिकारी-लोकहित के विरुद्ध समझता है।'"

प्रान्तों के कुछ अधिनियमों में यही शब्द प्रयुक्त हैं और मैं नहीं समझता कि इन्हें यहां प्रविष्ट न करने के लिये कोई कारण है। इनसे यह आपत्ति भी दूर

हो जायेगी कि हम किसी व्यक्ति को केवल इस कारण निरुद्ध कर रहे हैं कि उसका मामला निवारक-निरोध के मामलों की श्रेणी में आता है और हम उसे वे कारण भी नहीं बता रहे हैं जिनके आधार पर वह निरुद्ध किया गया है। जिस संशोधन को मैंने प्रस्तावित किया है कि उससे इस उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है।

दूसरा प्रश्न यह है कि.....

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास : जनरल): क्या यह उस उपबन्ध के अतिरिक्त है जो खण्ड (1) में है? एक इस आशय का उपबन्ध रखा जा चुका है कि कोई व्यक्ति बिना सूचना दिये हुए हवालात में निरुद्ध नहीं रखा जायेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यह उस व्यक्ति के संबंध में नहीं है जो निवारक-निरोध के लिये बन्दी किया गया हो।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या यह उस व्यक्ति के संबंध में नहीं है जो निवारक-निरोध के लिये बन्दी किया गया हो? मैं समझता था कि खण्ड (1) प्रत्येक प्रकार के निरोध के संबंध में है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जी नहीं, कम से कम हम यह नहीं समझते हैं। ये मामले दो श्रेणियों में विभाजित किये गये हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** वे वकील हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** किसी न्यायालय में हो सकते हैं यहां नहीं।

***अध्यक्ष:** वे वकील नहीं हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि हम यह कहें कि खण्ड (1) और (2) की कोई बात खण्ड (3) पर लागू नहीं होगी। उद्देश्य यही है। इस प्रकार इस आपत्ति का निराकरण हो जाता है।

अब मैं बिना मुकदमा चलाये हुए और बिना जांच किये हुए तीन मास तक निरुद्ध रखने के प्रश्न को उठाता हूं। कुछ सदस्यों ने कहा है कि 15 दिन से अधिक काल तक निरुद्ध न रखना चाहिये और अन्य लोगों ने अन्य कालावधि का सुझाव रखा है। मैं सभा को बताना चाहता हूं कि हमने यह क्यों विचार किया कि तीन मास की अवधि ठीक ही अवधि है और 15 मास की अवधि बहुत लम्बी अवधि है। हमसे यह कहा गया कि बन्दियों के बहुत से मामले होंगे। हम कह नहीं सकते कि आगे चल कर देश की स्थिति क्या होगी और संविधान देश की किस स्थिति में प्रवर्तन में आयेगा और इस देश के लोग तथा लोगों के दल शक्ति प्राप्त करने के लिये संविधानिक उपायों का आश्रय लेंगे या नहीं अथवा क्या वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये असंविधानिक उपायों को काम में लायेंगे।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

यदि हममें से सभी लोग अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये संविधानिक उपायों का ही आश्रय लेते तो मेरे विचार से स्थिति भिन्न होती और निवारक-निरोध के संबंध में उपबन्ध रखने की आवश्यकता ही न होती।

किन्तु, मेरे विचार से, विधि बनाते समय हमें खराब से खराब स्थिति की कल्पना कर लेनी चाहिये और अच्छी से अच्छी स्थिति के बारे में ही नहीं विचार करना चाहिये। इसलिये यदि हम इस स्थिति को ध्यान में रख कर व्यवस्था करें, अर्थात् इस स्थिति को ध्यान में रखें कि कई ऐसे लोग अथवा दल भी हो सकते है जिन्हें संविधानिक उपायों का आश्रम लेने का धैर्य न हो और अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उतावले हों और असंविधानिक उपायों का आश्रय लेना चाहते हों, तो कार्यपालिका को बहुत से ऐसे लोगों को हवालात में निरुद्ध करना होगा। यदि हम यह मानें कि अवैध कार्यों के कारण हमें बहुत से लोगों को निरुद्ध करना होगा और हमें परन्तुक के उप-खण्ड (क) के उपबन्धों को प्रभाव में लाना होगा तो स्थिति क्या होगी? क्या कार्यपालिका के लिये यह सम्भव होगा कि वह निरुद्ध किये हुए इतने लोगों के, अथवा यों कहिये कि सौ लोगों के मामलों को तैयार करे, उनके संबंध में सभी सूचना इकट्ठी करे और मामलों को मंत्रणा-मंडली के सामने रखे। क्या यह सब सम्भव है? क्या मंत्रणा-मंडली के लिये यह सम्भव है कि वह तीन मास में इतने अधिक मामलों को निबटा दे क्योंकि मैं यह कहूंगा कि परन्तुक के उपखण्ड (क) के उपबन्ध निश्चित उपबन्ध हैं क्योंकि यदि किसी व्यक्ति को तीन मास से अधिक काल के लिये निरुद्ध रखना होगा तो इसके लिये मंत्रणा-मंडली की आज्ञा की आवश्यकता होगी।

इसलिये इस विषय के बारे में प्रशासन-संबंधी कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए मसौदा-समिति ने विचार किया कि उस स्थिति में जिन बातों की आवश्यकता होगी वे तीन मास की कालावधि रख कर पूरी हो जायेंगी। इस कालावधि को रखने में मसौदा-समिति का और कोई उद्देश्य नहीं है और मुझे आशा है कि सभा को मैंने जो बातें बताई हैं उन पर विचार करके सभा यह स्वीकार करेगी कि इससे अच्छा तथा युक्तियुक्त उपबन्ध नहीं बनाया जा सकता था।

अब मैं मंत्रणा-मंडली के संबंध में कुछ कहूंगा। इस संबंध में दो प्रश्न उठाये गये हैं। एक प्रश्न यह है कि मंत्रणा-मंडली किस प्रक्रिया का अनुसरण करेगी। उपखण्ड (क) में इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि मंत्रणा-मंडली किस प्रक्रिया का अनुसरण करेगी। इस संबंध में तीखे प्रश्न पूछे गये हैं कि क्या निवारक-निरोध के उद्देश्य से जिस व्यक्ति को हवालात में निरुद्ध किया गया है उसके मामले से सम्बद्ध सभी ऐसे कागजात मंत्रणा-मंडली के सामने रखे जायेंगे जिनके फलस्वरूप वह निरुद्ध किया गया है।

यह तीखा प्रश्न भी पूछा गया है कि क्या अभियुक्त को मंत्रणा-मंडली के सामने उपस्थित होने, गवाहों की जांच करने और अपना बयान देने का अधिकार होगा। यह सच है कि मंत्रणा-मंडली अपनी जांच में जिस प्रक्रिया का अनुसरण

करेगी उसका उपखण्ड (क) में कोई उल्लेख नहीं है। यदि थोड़ी देर के लिये हम यह मानें कि उपखण्ड (क) में कोई सुधार नहीं किया जाता है तो इसका क्या प्रभाव होगा? मैं देखता हूं कि इस उपबन्ध के अधीन आज्ञा के समर्थन के लिये प्रतिवेदन को अवश्य ही प्राप्त करना होगा। कार्यपालिका के लिये किसी व्यक्ति को तीन मास से अधिक काल के लिये निरुद्ध रखना अवैध होगा, जब तक कि वह इस काल की समाप्ति पर मंत्रणा-मंडली की कोई सिफारिश न प्राप्त कर ले। इसलिये यदि कार्यपालिका मंत्रणा-मंडली के सामने उन कागजात को न रखेगी जिन पर वह निर्भर करती है तो उसे बहुत हानि होगी क्योंकि वह उस व्यक्ति को तीन मास से अधिक काल तक निरुद्ध नहीं रख सकेगी।

इसलिये अपने पक्ष के ही समर्थन के लिये कार्यपालिका के लिये यह उचित ही नहीं बल्कि आवश्यक भी होगा कि वह मंत्रणा-मंडली के सामने उन कागजात को रखे जिन पर वह विश्वास रखती है। यदि वह यह न करेगी तो निवारक-विधि के प्रशासन के संबंध में वह बहुत बड़ा खतरा उठायेगी। मेरे विचार से इन्हें जब कार्यपालिका मंत्रणा-मंडली के सामने रखेगी तो पर्याप्त रक्षा हो जायेगी।

यदि मेरे मित्रों को इससे संतोष नहीं है तो मैं एक अन्य प्रस्ताव प्रस्तुत करता हूं। वह यह है कि अनुसरणीय प्रक्रिया के संबंध में उपखण्ड (क) में कोई स्पष्ट उपबन्ध न रखकर उपखण्ड (4) के अन्त में निम्नलिखित शब्द जोड़ दिये जायें: "इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के परन्तुक के खण्ड (क) के अधीन की जाने वाली जांच में मंत्रणा-मंडली द्वारा अनुसरणीय प्रक्रिया को भी संसद निर्धारित कर सकेगी।" मंत्रणा-मंडली जिस प्रक्रिया का अनुसरण करेगी उसके संबंध में उपबन्ध निश्चित करने की शक्ति मैं संसद को देने के लिये तैयार हूं। मेरे विचार से इससे उस स्थिति में जो कुछ भी आवश्यक होगा वह पूरा हो जायेगा।

श्रीमान्, अनुच्छेद 15-क के विभिन्न भागों के विरुद्ध जो आलोचना की कई है उसे ध्यान में रखकर मैं इन सब संशोधनों को करने के लिये तैयार हूं।

अब मैं कुछ प्रकीर्ण सुझावों पर विचार करूंगा।

***श्री जसपतराय कपूर:** इस दशा में सम्भवत: खण्ड (2) के परन्तुक के उपखण्ड (ख) को निकाल देना होगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** किसी उपबन्ध को नहीं निकालना होगा।

***डॉ. बख्शी टेकचन्द** (पूर्वी पंजाब : जनरल): आप इसके लिये सहमत हो गये हैं कि संबंधित व्यक्ति को निरुद्ध करने के कारण बताये जायेंगे और उसकी सफाई ली जायेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** और उसे एक लिखित बयान देने का भी अवसर दिया जायेगा।

***डॉ. बख्शी टेकचन्दः** क्या आप उस अन्य सुझाव से भी सहमत हैं जिसकी ओर मैंने ध्यान आकृष्ट किया था अर्थात् जैसाकि मद्रास के अधिनियम में उपबंधित है, क्या सफाई मंत्रणा-मंडली के सामने रखी जायेगी?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं यह कहता हूं कि उसके सामने सभी कागजात रखे जायेंगे।

***डॉ. बख्शी टेकचन्दः** हो सकता है कि उसके सामने सभी कागजात न रखे जायें। मुझे कुछ अनुभव है। वे यह कहेंगे कि यह एक बहुत छोटा मामला है। यदि आप अभियुक्त को निश्चित समय में सफाई देने का अवसर दे रहे हैं तो इस उपबन्ध को रखने में आपको संकोच क्यों होता है? मद्रास के अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (1) के उपखण्ड (2) में यह उपबन्ध है कि सफाई मंत्रणा-मंडली के सामने रखी जायेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मेरे विचार से मैंने जो कुछ कहा है उसमें यह सन्निहित है।

***डॉ. बख्शी टेकचन्दः** इसे स्पष्ट ही क्यों न कर दिया जाये? यह उपबंध बंबई के अधिनियम में अथवा संयुक्तप्रान्त के अधिनियम में नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** जैसाकि मैं कह चुका हूं, मंत्रणा-मंडली के सामने कागज प्रस्तुत करने के संबंध में उपखण्ड (क) के अधीन जो उपबन्ध है उसमें अभियुक्त का बयान भी प्रस्तुत करना सन्निहित है। यदि यह बात नहीं है तो मैं एक उपबन्ध इस आशय का भी रख रहा हूं कि संसद विधि द्वारा प्रक्रिया निर्धारित कर सकती है, जिसके फलस्वरूप संसद यह निश्चित रूप से कह सकेगी कि अमुक-अमुक कागजात मंत्रणा-मंडली के सामने रखे जायें। इसके अतिरिक्त मैं अधिक रियायत करने के लिये तैयार नहीं हूं।

***श्री महावीर त्यागीः** डॉ. अम्बेडकर कृपा करके मुझे एक मिनट दें।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अभी नहीं।

***श्री महावीर त्यागीः** मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या खण्ड (4) के अधीन संसद अथवा प्रान्तों द्वारा बनाई हुई विधि के अनुसार बन्दी अपने मामलों का पुनर्विलोकन न्यायाधिकरण द्वारा करवा सकेंगे?

श्रीमान्, मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या उन बन्दियों को जो खण्ड (4) के अधीन संसद निर्मित विधि के अधीन विरुद्ध किये जायेंगे, अपने मामलों का पुनर्विलोकन न्यायाधिकरण द्वारा कराने का विशेषाधिकार प्राप्त होगा या नहीं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मेरे मित्र श्री त्यागी ऐसे बोल रहे हैं जैसे कि वे इस भय से अत्यंत पीड़ित हों कि वे स्वयं बन्दी होने जा रहे हों। मुझे इसकी सम्भावना नहीं दिखाई देती।

***श्री महावीर त्यागीः** मैं आपकी स्थिति सुदृढ़ करने का प्रयास कर रहा हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अब मैं जो प्रकीर्ण सुझाव रखे गये हैं, उन्हें उठाऊंगा।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** उन सुझावों का क्या होगा जो गवाहों की परीक्षा तथा प्रतिरक्षा के संबंध में हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** गवाहों की परीक्षा का अधिकार अपराध प्रक्रिया संहिता तथा साक्ष्य अधिनियम में दिया ही हुआ है। जब तक कि कोई प्रान्तीय सरकार बिल्कुल ही पागल न हो जाये और इन उपबंधों को निकाल न दे तब तक इस प्रकार के किसी उपबन्ध को रखना अनावश्यक है। प्रतिरक्षा में गवाहों की परीक्षा सन्निहित है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** उनके कारण इस सीमा तक शक्ति छीनने का भी प्रयास किया गया है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यदि आप भारत के किसी एक ऐसे मामले का भी उदाहरण दे सकें जिसमें गवाहों की परीक्षा करने का अधिकार छीना गया है, तो यह मेरी समझ में आ सकता है। मैंने ऐसा कोई मामला नहीं देखा है।

श्रीमान्, अधिकतम दंड का भी, प्रश्न उठाया गया है। जो लोग यह चाहते हैं कि अधिकतम दंड भी निश्चित कर दिया जाये, वे कृपा करके खण्ड (4) के उपबन्धों को देखें जिनमें यह निश्चित रूप से कह दिया गया है कि इस संबंध में विधि बनाते समय संसद अधिकतम अवधि भी निश्चित करेगी।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** "कर सकती है" शब्द हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** "कर सकती है" का अर्थ "करेगी" है।

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** संसद कर भी सकती है और नहीं भी कर सकती है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यह सच है किन्तु जब वह करेगी तो वह अधिकतम अवधि भी निश्चित करेगी।

एक अन्य प्रश्न भी है जो बन्दियों के तथा उनके परिवारों के पोषण के संबंध में है।

***श्री जसपतराय कपूरः** सामयिक पुनर्विलोकन का क्या होगा?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं उस प्रश्न को भी उठाऊंगा। वह ऐसा विषय नहीं है जिसे हम संविधान में प्रविष्ट कर सकते हैं। कुछ मामलों में उसकी आवश्यकता हो सकती है और कुछ मामलों में उसकी आवश्यकता नहीं भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त खण्ड (4) द्वारा संसद को पोषण के संबंध में उपबन्ध बनाने की शक्ति भी दी गई है।

मेरा अपना यह विचार है कि पोषण के पक्ष में जो भी तर्क उपस्थित किया जायेगा उसमें कुछ जान नहीं होगी। यदि कोई व्यक्ति राज्य की जड़ ही उखाड़ रहा हो और यदि वह उस कारण बन्दी किया जाये, तो कारागार में भोजन पाने का तो उसे अधिकार हो सकता है किन्तु उसे पोषण की मांग करने का कोई अधिकार नहीं हो सकता। किन्तु संसद और विधान-मंडल यह कृपा कर सकते हैं और इस प्रकार का उपबन्ध रख सकते हैं। मेरे विचार से खण्ड (4) के अधीन संसद जो भी अधिनियम बनायेगी उसमें इस प्रकार का उपबन्ध रख सकती है।

बन्दियों के मामलों के पुनर्विलोकन के संबंध में भी मेरा यह विचार है कि कोई कारण नहीं है कि प्रान्तीय सरकारें जो विधि बनायें, अथवा खण्ड (4) के अधीन संसद जो विधि बनाये, उसमें सामयिक पुनर्विलोकन के लिये उपबन्ध नहीं रखा जा सकता है। मेरे विचार से यह एक प्रशासन-संबंधी विषय ही है और इसका विनियमन विधि द्वारा हो सकता है।

मेरे मित्र श्री अनन्तशयनम् आयंगर ने कहा है कि बंदियों के लिये मेरे हृदय में अधिक स्थान नहीं है और वह इसलिये कि मैं कभी जेल नहीं गया हूं, किन्तु उन्हें मैं यह बताना चाहता हूं कि पिछले मंत्रिमंडल में यदि किसी व्यक्ति ने पुनर्विलोकन के संबंध में नियम रखवाया तो मैंने ही रखवाया। मंत्रि मंडल के अधिकांश लोग उसके विरुद्ध थे। मैंने तथा मंत्रिमंडल के एक यूरोपियन सदस्य ने उसके लिये संघर्ष किया और हम उसे निर्धारित करवाने में सफल हुए। इसलिये स्वतंत्रता के लिये हृदय में स्थान होने के लिये जेल जाना आवश्यक नहीं है।

मेरे मित्र श्री कामत ने एक अन्य प्रश्न भी उठाया है। उन्होंने मुझ से पूछा है कि क्या निवारक-निरोध के मामलों में उच्चतम न्यायालय अभियुक्त के पक्ष में लेख निकाल सकते हैं। यह स्पष्ट है कि स्थिति इस प्रकार है। किसी भी मामले में बन्दी-प्रत्यक्षीकरण के लेख के बारे में मांग की जा सकती है और वह निकाला भी जा सकता है किन्तु अन्य लेख प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति को देखकर ही निकाले जा सकते हैं। बन्दी प्रत्यक्षीकरण के लेख का उद्देश्य एक सीमित उद्देश्य है। वह न्यायालय द्वारा केवल यह ज्ञात करने के लिये निकाला जाता है कि क्या संबंधित व्यक्ति विधि के अधीन बन्दी किया गया है अथवा

क्या कार्यपालिका की सनक से बन्दी किया गया है। जब उच्च न्यायालय को यह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है कि वह व्यक्ति किसी विधि के अधीन बन्दी किया गया है तो बन्दी-प्रत्यक्षीकरण का लेख समाप्त हो जाता है। यदि वह किसी विधि के अधीन बन्दी नहीं बनाया गया हो तो उसके पक्ष के लोग ज्यादती को दूर कराने के लिये किसी अन्य प्रकार के लेख की मांग करेंगे। मैं श्री कामत को यही उत्तर देना चाहता हूं।

श्रीमान्, मुझे आशा है कि मैंने जिन संशोधनों का सुझाव रखा है उनके साथ सभा अनुच्छेद 15-क को स्वीकार कर लेगी।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल) मेरा प्रश्न यह है कि क्या हमने इस संबंध में इस अनुच्छेद में कोई उपबन्ध रखा है या नहीं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उसकी आवश्यकता नहीं है। यह सभी जानते हैं। यदि आप कष्ट में पड़ें तो आप किसी वकील को रख लें। वह आपको सब कुछ बता देगा।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं आप ही को रखूंगा।

***अध्यक्ष:** क्या अब इस संबंध में अधिक बहस करना आवश्यक है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** सभा इस प्रश्न पर छह घंटे तक विचार-विमर्श कर चुकी है।

***सरकार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाब : सिख): मैं इस कोने से आपकी दृष्टि में आने का प्रयास करता रहा हूं। किन्तु मुझे अभी तक सफलता नहीं मिली है। यदि आप आज्ञा दें तो मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं कल से खड़ा होता रहा हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): यह संविधान का एक महत्वपूर्ण अनुच्छेद है क्योंकि यह वैयक्तिक स्वातंत्र्य के विषय में है। इसके संबंध में विचार-विमर्श के समय को कम न किया जाये।

***अध्यक्ष:** सभा की जो भी इच्छा हो वही मेरी भी इच्छा है। बहस समाप्त करने का प्रस्ताव उपस्थित किया जा चुका है। प्रस्ताव यह है कि:

"अब प्रस्ताव पर मत लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्षः** मैं डॉ. अम्बेडकर को दूसरी बार उत्तर देने का अवसर नहीं दे सकता।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** जी नहीं, श्रीमान्। इस संबंध में किसी ने कुछ नहीं कहा।

***अध्यक्षः** अब मैं संशोधन पर मत लूंगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** वे सब वापस ले लिये जायें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : जनरल): अभी नये खण्ड जोड़े गये हैं। क्या उन पर अब मत लिया जायेगा?

***अध्यक्षः** जी हां, अभी मत लिया जायेगा।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** बिना उनकी प्रतियों को देखे हुए उन्हें समझने में कठिनाई होगी।

***डॉ. बख्शी टेकचन्दः** वे किसी अर्थ में भी नये संशोधन नहीं कहे जा सकते और इसलिये उन पर विचार-विमर्श करने में अधिक समय लगाने की आवश्यकता नहीं है। केवल पं. भार्गव के संशोधनों के कुछ अंश स्वीकार किये गये हैं। उन पर पर्याप्त विचार-विमर्श हो चुका है।

***अध्यक्षः** मैं भी यही कहने जा रहा था।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 15 के पश्चात् निम्नलिखित नवीन अनुच्छेद जोड़ दिये जाये:

'15A. No procedure within the meaning of the preceding section shall be deemed to be established by law if it is inconsistent with any of the following principles:—

(i) Every arrested person if he has not been released earlier shall be produced before a Magistrate within 24 hours of his arrest excluding the reasonable period of journey from the place of arrest to the Court of the Magistrate and informed of the nature of the accusation for his arrest and detained further only by the authority of the Magistrate for reasons recorded.

(ii) Every person shall have the right of access to Courts to being defended by counsel in all proceedings and trials before courts.

(iii) No person shall be subjected to unnecessary restraints or to unreasonable search of person or property.

(iv) Every accused person is entitled to a speedy and public trial unless special law or public interests demand a trial *in camera*.

(v) Every person shall have the right of cross examining the witness produced against him and producing his defence.

(vi) Every convicted person shall have the right of at least one appeal against his conviction.'

15B. No procedure within the meaning of Section 15 shall be deemed to be established by law in case of preventive detention if it is inconsistent with any of the following principles:—

(i) No person shall be detained without trial for a period longer than it is necessary.

(ii) Every case of detention in case it exceeds the period of fifteen days shall be placed within a month of the date of arrest before an independent tribunal presided over by a judge of the High Court or a person possessed of qualification for High Court Judgeship armed with powers of summary inquiries including examinations of the person detained and of passing orders of further detention, conditional or absolute release and other incidental and necessary orders.

(iii) No such detention shall continue unless it has been confirmed within a period of two months from the date of arrest by an order of further detention from such tribunal in which case quarterly reviews of such detentions by independent tribunal armed with powers of passing of order of release conditional

[अध्यक्ष]

or otherwise and other necessary and in accidental orders shall be made.

(iv) Such detention shall in the total not exceed the period of one year from the date of arrest.

(v) Such detained person shall not be subjected to hard labour or unnecessary restrictions otherwise than for wilful disobedience of lawful orders and violation of jail rules.'"

[15-क. पूर्ववर्ती धारा के प्रयोजन के लिये कोई भी प्रक्रिया विधि-स्थापित न समझी जायेगी यदि वह इन सिद्धान्तों में से किसी से असंगत हो:-

(1) प्रत्येक बन्दी किया हुआ व्यक्ति, यदि वह पहले ही न छोड़ दिया गया हो, तो बन्दीकरण के स्थान से दंडाधिकारी के न्यायालय तक यात्रा के लिये अपेक्षित समय को छोड़कर, बन्दीकरण से 24 घंटे के भीतर दंडाधिकारी के सामने उपस्थित किया जायेगा और उसे बताया जायेगा कि किस तरह के अभियोग में उसे बन्दी किया गया है और दंडाधिकारी के आदेश से ही अभिलिखित कारणों के आधार पर वह और आगे निरुद्ध रखा जा सकेगा।

(2) न्यायालय के समक्ष चलने वाले सभी मुकदमों और कार्यवाहियों में वकील द्वारा अपनी प्रतिरक्षा कराने के लिये हर व्यक्ति को न्यायालय में पहुंचने का अधिकार होगा।

(3) किसी व्यक्ति पर अनावश्यक प्रतिबन्ध न लगाया जायेगा और न उसके शरीर की या उसकी सम्पत्ति की अनुचित तलाशी ली जायेगी।

(4) प्रत्येक अभियुक्त को इसका अधिकार है कि उसका मुकदमा खुली अदालत में शीघ्र चलाया जाये जब तक कि किसी विशेष विधि या जनहित के लिये बन्द अदालत में मुकदमा चलाना अपेक्षित न हो।

(5) प्रत्येक व्यक्ति को उसके खिलाफ पेश किये गये गवाह से जिरह करने का और अपनी प्रतिरक्षा प्रस्तुत करने का अधिकार होगा।

(6) प्रत्येक सिद्ध-दोष व्यक्ति को अपनी दोष-सिद्धि के विरुद्ध कम से कम एक अपील करने का अधिकार होगा।

15-ख. धारा 15 के प्रयोजन के लिये, निवारक-निरोध के मामले में, कोई भी प्रक्रिया विधि-स्थापित न समझी जायेगी यदि वह इन सिद्धान्तों में से किसी से असंगत हो:

(1) बिना मुकदमा चलाये व्यक्ति को आवश्यक अवधि से अधिक काल तक निरुद्ध नहीं रखा जायेगा।

(2) निरोध-संबंधी प्रत्येक मामला, यदि 15 दिन से अधिक काल तक अभियुक्त निरुद्ध रखा जाता है, बन्दीकरण से एक मास के भीतर एक स्वतंत्र न्यायाधिकरण के सामने रखा जायेगा जिसकी अध्यक्षता उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश या उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने की अर्हता रखने वाला कोई व्यक्ति करेगा, जिसे सरसरी पूछताछ की, निरुद्ध व्यक्ति से सवाल करने की तथा उसे और आगे निरुद्ध रखने, उसे प्रतिबंध सहित अथवा पूर्ण विमुक्ति देने का आदेश निकालने की तथा अन्य आनुषंगिक आदेश निकालने की शक्ति प्राप्त रहेगी।

(3) ऐसा कोई निरोध और आगे के लिये जारी न रखा जायेगा जब तक कि बन्दीकरण की तारीख से दो मास की अवधि के अन्दर, ऐसे न्यायाधिकरण की ओर से और आगे निरुद्ध रखने के लिये दिये गये आदेश द्वारा उसकी पुष्टि न हो जाये और उस दशा में ऐसे निरोध-विषयक मामलों का एक स्वतंत्र न्यायाधिकरण द्वारा, जिसे शर्तों के साथ या बिना शर्तों के विमुक्ति का आदेश देने का अधिकार रहेगा, त्रैमासिक पुनर्विलोकन किया जायेगा और अन्य आवश्यक तथा आनुषंगिक आदेश निकाले जायेंगे।

(4) ऐसा निरोध कुल मिलाकर, बन्दीकरण की तारीख से एक साल से अधिक अवधि तक जारी नहीं रहेगा।

(5) इस प्रकार निरुद्ध व्यक्ति से, वैध आदेशों की जानबूझ कर अवहेलना करने तथा जेल के नियमों को भंग करने के लिये जितना अपेक्षित होगा उससे अन्यथा कठोर श्रम न लिया जायेगा और न उस पर अनावश्यक प्रतिबन्ध लगाये जायेंगे।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधन संख्या 3 उठाता हूं। क्या इन संशोधनों को पढ़ना आवश्यक है?

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** उन्हें पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। जो संशोधन स्वीकार किये जा चुके हैं वे उठाये जा सकते हैं और अन्य संशोधनों को छोड़ा जा सकता है।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) और (2) के स्थान पर यह रखा जाये:

[अध्यक्ष]

'15A. No procedure shall be deemed to be established by law within the meaning of article 15 if the law prescribing the procedure for criminal proceedings and trials of accused persons contravenes any of the following established principles and rights—

(a) the right of production of the person under custody before Magistrate within 24 hours of his arrest (excluding the reasonable period of journey from the place of arrest to the court of Magistrate) and further detention only with the authority of the Magistrate for reasons recorded;

(b) the right of consultation after arrest and before trial and the right of being defended by the Counsel of his choice;

(c) the right of full opportunity for cross-examination of witnesses produced against the accused and production of his defence;

(d) the right of at least one appeal in case of conviction.'"

[15-क. अनुच्छेद 15 के प्रयोजनार्थ कोई प्रक्रिया विधि-स्थापित नहीं मानी जायेगी यदि अभियुक्त व्यक्तियों पर मुकदमा चलाने और दण्ड-विषयक कार्यवाही की प्रक्रिया विहित करने वाली विधि इन चिरस्थापित सिद्धान्तों और अधिकारों में से किसी का उल्लंघन करती हो:—

(क) हवालात में निरुद्ध रखे गये व्यक्ति को इस बात का अधिकार होगा कि उसके बन्दीकरण से 24 घंटे के अन्दर (बन्दीकरण के स्थान से दण्डाधिकारी के न्यायालय तक यात्रा के लिये अपेक्षित समय को छोड़कर) उसे दण्डाधिकारी के समक्ष पेश किया जाये तथा दण्डाधिकारी के आदेश से अभिलिखित कारणों के आधार पर ही उसे आगे निरुद्ध रखा जाये।

(ख) बन्दीकरण के पश्चात् और मुकदमा चलने से पहले अपनी रुचि के वकील से परामर्श करने अथवा प्रतिरक्षा कराने का उसे अधिकार होगा।

(ग) अभियुक्त व्यक्ति को, अपने विरुद्ध पेश किये गये गवाह से जिरह करने और अपनी प्रतिरक्षा पेश करने का अवसर पाने का अधिकार होगा।

(घ) दोष सिद्ध ठहराये जाने पर कम से कम एक बार अपील करने का उसे अधिकार होगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 3 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) के आगे ये खण्ड जोड़े जायें:-

'(e) right to freedom from torture and unnecessary restraints and from unreasonable search of person and property;

(f) right to a speedy and public trial unless special law and public interest demand a trial in camera.'"

[(ङ) यातना से और अनावश्यक प्रतिबन्धों से तथा शरीर और सम्पत्ति की अनुचित तलाशी से मुक्ति पाने का उसे अधिकार होगा।

(च) उसे इसका अधिकार होगा कि उसका मुकदमा खुली अदालत में शीघ्र चलाया जायेगा जब तक कि किसी विशेष विधि या जनहित के लिये बन्द अदालत में मुकदमा चलना अपेक्षित न हो।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) 'a legal practitioner of his choice' (अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी) शब्दों के स्थान पर 'and be defended by a legal practitioner of his choice in all criminal proceeding and trials' (और सभी अपराध संबंधी कार्यवाहियों और मुकदमों में अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी से प्रतिरक्षा करा सकेगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** अब संशोधन संख्या 7 आता है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** डॉ. अम्बेडकर ने इस संशोधन के एक अंश को स्वीकार किया है। उस पर मत लेने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यदि वह अस्वीकार हो जायेगा तो डॉ. अम्बेडकर उस अंश को स्वीकार नहीं कर सकेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे संशोधन स्वतंत्र संशोधन हैं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क में खण्ड (1) के स्थान पर यह खण्ड रखा जाये:

'(2) Every arrested person if he has not been released earlier shall be produced before a Magistrate within 24 hours of his arrest excluding the reasonable period of journey from the place of arrest to the court of the Magistrate and detained further only by the authority of the Magistrate for reasons recorded.'"

[(2) प्रत्येक बन्दी किया गया व्यक्ति, यदि वह पहले नहीं छोड़ दिया गया हो तो, बन्दीकरण के स्थान से दण्डाधिकारी के न्यायालय तक यात्रा के लिये अपेक्षित युक्तियुक्त समय को छोड़कर अपने बन्दीकरण के 24 घंटे के भीतर दंडाधिकारी के सामने पेश किया जायेगा और अभिलिखित कारणों के आधार पर दंडाधिकारी के ही आदेश से और आगे निरुद्ध रखा जायेगा।]

अथवा विकल्पत:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (2) के अन्त में ये शब्द जोड़ दिये जायें:

'and for reasons recorded. (और अभिलिखित कारणों के आधार पर)'"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (2) के बाद ये खण्ड रखे जायें:

'(2a) Every person accused of any offence or against whom criminal proceedings are being taken shall have the full opportunity of cross-examining the witnesses produced against him and producing his defence.

(2b) Every person sentenced to imprisonment shall have the right of at least one appeal against his conviction.'"

[(2-क) प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को, जिस पर किसी अपराध का अभियोग लगाया गया हो या जिसके विरुद्ध दण्ड-संबंधी कार्यवाही की जा रही हो, अपने विरुद्ध पेश किये गये गवाह से जिरह करने तथा अपनी प्रतिरक्षा उपस्थित करने का पूरा अवसर दिया जायेगा।

(2-ख) प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को, जिसे कारावास का दण्ड दिया गया हो, अपनी दोष-सिद्धि के विरुद्ध कम से कम एक बार अपील करने का अधिकार होगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) और (4) के स्थान पर यह रखा जाये:

'15B. No procedure shall be deemed to be established by law within the meaning of article 15 if the law prescribing the prevention or detention contravenes any of the following principles:—

(1) Such detention without trial shall only be allowable for alleged participation in dangerous or subversive activities affecting the public peace, security of the State and relation between different classes and communities inhabiting India or membership of any organisation declared unlawful by the State.

(2) Such detention shall not be longer than two months unless an independent tribunal consisting of two or more persons being High Court judges or possessing qualifications for High Court judgeships and armed with powers of enquiry including examination of the detainee recommend continuance of detention within the said period of two months.

[अध्यक्ष]

(3) Such detention shall not exceed the total period of one year.

(4) Such detention shall be free from unnecessary restrictions and hard labour otherwise than for wilful disobedience of lawful orders and violation of jail rules:

Provided that the Parliament shall never be precluded from prescribing other reason and circumstances which may necessitate such detention and the conditions of such detention.'"

[15-ख. अनुच्छेद 15 के प्रयोजनार्थ कोई प्रक्रिया विधि-स्थापित न समझी जायेगी यदि निवारण या निरोध को विहित करने वाली विधि इन सिद्धान्तों में से किसी का भी उल्लंघन करती हो:-

(1) बिना मुकदमा चलाये उसी सूरत में किसी को निरुद्ध रखा जा सकता है जबकि उसके विरुद्ध ऐसी खतरनाक या विप्लवकारी कार्यवाहियों में भाग लेने का आरोप लगाया गया हो जिसका लोक-शांति, राज्य की सुरक्षा और भारत में बसने वाले विभिन्न वर्गों तथा समुदायों के आपसी संबंध पर अथवा राज्य द्वारा अवैध घोषित किसी संगठन की सदस्यता पर प्रभाव पड़ता हो।

(2) कोई व्यक्ति इस प्रकार दो मास से अधिक अवधि तक निरुद्ध न रखा जायेगा जब तक कि दो या अधिक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने की अर्हता रखने वाले व्यक्तियों से बना एक स्वतंत्र न्यायाधिकरण, जिसे उस मामले की जांच करने की शक्ति प्राप्त हो, जिसमें निरुद्ध व्यक्ति से जिरह करना भी शामिल हो, उक्त दो मास की अवधि के अन्दर उसे और आगे निरुद्ध रखने की सिफारिश न कर दे।

(3) ऐसा निरोध कुल मिलाकर एक वर्ष से अधिक अवधि के लिये नहीं होगा।

(4) ऐसे निरोध काल में वैध आदेशों की जानबूझ कर अवहेलना करने और जेल के नियमों को भंग करने के लिये जितना अपेक्षित होगा उससे अन्यथा न तो अनावश्यक प्रतिबंध लगाये जायेंगे और न कठोर श्रम लिया जायेगा:

परन्तु संसद को इस प्रकार के निरोध के लिये अन्य कारण तथा परिस्थितियां विहित करने तथा ऐसे निरोध की दशाओं को विहित करने मे कभी भी कोई रोक नहीं होगी।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के परन्तुक में 'three' (तीन) शब्द के स्थान पर 'two' (दो) शब्द रखा जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के परन्तुक के उपखण्ड (क) में 'Board' (मंडली) शब्द के पश्चात् 'with powers of inquiry including examination of persons detained' (जांच की शक्ति, जिसमें निरुद्ध व्यक्तियों की परीक्षा भी शामिल है) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के परन्तुक के उपखण्ड (ख) में ये शब्द जोड़ दिये जायें:

'but in no case more than six months' (पर किसी हालत में छह मास से अधिक नहीं।)"

अथवा

'but in no case more than a year' (परन्तु किसी हालत में एक वर्ष से अधिक नहीं।)"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (4) में 'circumstances' (परिस्थितियां) शब्द के पश्चात् 'and the conditions' (और अवस्थाओं) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (4) में 'three months' (तीन मास) शब्दों के स्थान पर 'one month' (एक मास) अथवा 'two months' (दो मास) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) के स्थान पर यह रखा जाये:

'(1) Every person arresting another in due course of law shall, at the time of the arrest or as soon as practicable thereafter, inform that person the reasons or grounds for such arrest, nor shall he be denied the right to consult a legal practitioner of his own choice.'"

[(1) प्रत्येक ऐसा व्यक्ति जो किसी अन्य व्यक्ति को यथोचित विधि प्रणाली के अनुसार बन्दी करे वह बन्दीकरण के समय अथवा उसके पश्चात् जब कभी सम्भव हो उस व्यक्ति को बन्दीकरण के कारणों तथा आधार से सूचित करेगा और न वह अपनी रुचि के विधि-व्यवसायी से परामर्श करने के अधिकार से वंचित किया जायेगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) में 'as soon as may be' (यथाशक्य शीघ्र) शब्दों के पश्चात 'being not later than fifteen days' (पन्द्रह दिन के अन्दर) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) से उपखण्ड (ख) निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के परन्तुक के उपखण्ड (क) में 'a High Court has' (हिन्दी में-मंत्रणा-मंडली ने) शब्दों के पश्चात् 'after hearing the person detained' (निरुद्ध व्यक्ति की बातें सुनने के पश्चात्) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के परन्तुक के उपखण्ड (क) में 'such detention' (ऐसे निरोध) शब्दों के पश्चात् 'but so that the person shall in no event be detained for more than six months' (किन्तु जिसमें वह व्यक्ति किसी भी दशा में छह मास से अधिक अवधि के लिये निरुद्ध न रखा जाये) शब्द जोड़े जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (4) के साथ यह परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that if the earning member of a family is so detained his direct dependents shall be paid maintenance allowance.'"

[किन्तु यदि किसी परिवार का आजीविका कमाने वाला व्यक्ति इस प्रकार निरुद्ध किया जाये तो उसके अपने आश्रितों को पोषण का भत्ता दिया जायेगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) में 'as soon as may be' (यथाशक्य शीघ्र) शब्दों के स्थान पर 'before the expiration of seven days following his arrest' (उसके बन्दीकरण के पश्चात् सात दिन समाप्त होने के पूर्व) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (2) में 'as soon as may be' (यथाशक्य शीघ्र) शब्दों के स्थान पर 'within twenty four hours' (चौबीस घंटे के अन्दर) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (2) में 'magistrate' (दंडाधिकारी) शब्द जहां कहीं आया है उसके पश्चात् 'of the First class' (प्रथम श्रेणी) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (2) के स्थान पर यह रखा जाये:

'(2) Every person who is arrested shall be produced before the nearest magistrate within twenty four hours and no such person shall be detained in custody longer than twenty-four hours without the authority of a magistrate.'"

[(2) प्रत्येक बन्दी किया हुआ व्यक्ति निकटतम दंडाधिकारी के समक्ष 24 घंटे के अन्दर उपस्थित किया जायेगा और बिना दंडाधिकारी के प्राधिकार के ऐसा कोई व्यक्ति हवालात में 24 घंटे से अधिक समय के लिये निरुद्ध नहीं रखा जायेगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद के खण्ड (2) में अन्त में आये हुए 'magistrate' (दंडाधिकारी के प्राधिकार के बिना) शब्दों के पश्चात् 'who shall afford such person an opportunity of being heard' (जो ऐसे व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद के खण्ड (2) के पश्चात् यह नवीन खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(2a) No detained person shall be subjected to physical or mental ill-treatment.'"

[(2-क) किसी निरुद्ध व्यक्ति का शारीरिक अथवा मानसिक उत्पीड़न नहीं किया जायेगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क में से उसका खण्ड (3) निकाल दिया जाये।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के प्रवर्तन में आने वाले भाग के उपखण्ड (ख) में 'law' (विधि) शब्द के पश्चात् (हिन्दी में पहले) 'of the Union' (संघ की) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के परन्तुक के उपखण्ड (क) में से 'or are qualified to be appointed as' (अथवा नियुक्त होने की अर्हता रखते हैं) शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के अन्त में निम्नलिखित नवीन परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that in the case of any such person so recommended for detention as stated in sub-clause (a) of clause (3), the total period of his detention shall not extend beyond nine months provided the Advisory Board has in its possession direct and ample evidence that such person is a source of continuous danger to the State and the Society.'"

[परन्तु ऐसे किसी व्यक्ति के मामले में जिसे खण्ड (3) के उपखण्ड (क) के अनुसार निरुद्ध रखने की सिफारिश की गई हो, उसका निरोध काल कुल मिला कर नौ मास से अधिक नहीं होगा जब तक कि मंत्रणा-मंडली के पास इसका स्पष्ट तथा पर्याप्त प्रमाण न हो कि वह व्यक्ति राज्य तथा समाज के लिये हमेशा एक खतरा बना रहेगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 1 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 15-क के खण्ड (4) के पश्चात् यह नवीन खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(5) Notwithstanding anything contained in this article the powers conferred on the Supreme Court and the High Courts under article 25 and

article 202 of this Constitution as respects the detention of persons under this article shall not be suspended or abrogated or extinguished.'"

[(5) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी इस अनुच्छेद के अधीन लोगों को निरुद्ध करने के संबंध में इस संविधान के अनुच्छेद 25 तथा अनुच्छेद 202 के अधीन उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों को प्रदत्त शक्तियां न तो विलम्बित की जायेंगी और न निराकृत अथवा समाप्त की जायेंगी।]

संशोधन गिर गया।

मेरे विचार से कल हमने यही सब संशोधन उपस्थित किये थे। आज डॉ. अम्बेडकर ने कुछ संशोधन उपस्थित किये हैं और अब मैं उन पर मत लूंगा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 15-क के खण्ड (1) में 'consult' (परामर्श करने) शब्दों के पश्चात् 'and be depended by' (तथा प्रतिरक्षा कराने) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर दिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) में 'Nothing in this article' (इस अनुच्छेद में की कोई बात) शब्दों के स्थान पर 'Nothing in clauses (1) and (2) of the article' [इस अनुच्छेद के खण्ड (1) और (2) में की कोई बात] शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 15-क के खण्ड (3) के पश्चात् यह खण्ड प्रविष्ट किये जायें:

'(3a) Where an order is made in respect of any person under sub-clause (b) of clause (3) of this article the authority making an order shall as soon as may be communicate to him the grounds on which the order has been made and afford him the earliest opportunity of making a representation against the order.

[अध्यक्ष]

(3b) Nothing in clause (3a) of this article shall require the authority making any order under sub-clause (b) of clause (3) of this article to disclose the facts which such authority considers to be against the public interest to disclose.'"

[(3-क) जब इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) के अधीन किसी व्यक्ति के संबंध में आदेश दिया जाये तब आदेश देने वाला प्राधिकारी यथाशक्य शीघ्र उस व्यक्ति को जिन आधारों पर वह आदेश दिया गया है उनको बतायेगा तथा उस आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने के लिये उसे शीघ्रातिशीघ्र अवसर देगा।

(3-ख) इस अनुच्छेद के खण्ड (3-क) की किसी बात से इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के उपखण्ड (ख) के अधीन आदेश देने वाले प्राधिकारी के लिये ऐसे तथ्यों को प्रकट करना आवश्यक नहीं होगा जिनका कि प्रकट करना प्राधिकारी लोक-हित के विरुद्ध समझता है।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 15-क के खण्ड (4) के अन्त में यह जोड़ दिया जाये:

'and Parliament may also prescribe by law the procedure to be followed by an Advisory Board in an enquiry under clause (a) of the proviso to clause (3) of this article.'"

[और संसद विधि द्वारा यह भी विहित कर सकेगी कि इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के परन्तुक के खण्ड (क) के अधीन की जाने वाली जांच में मंत्रणा-मंडली द्वारा अनुसरणीय प्रक्रिया क्या होगी।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित अनुच्छेद 15-क संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 15-क संशोधित रूप में संविधान का अंग बना लिया गया।

***अध्यक्षः** मुझे खेद है कि मैं डॉ. बख्शी टेकचन्द के संशोधन पर मत लेना भूल गया। वास्तव में उसकी आवश्यकता भी न थी। उसका आशय डॉ. अम्बेडकर के संशोधन से पूरा हो जाता है।

अनुच्छेद 209-क

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 209 के पश्चात् भाग 6 के अध्याय 7 और 9 के बीच में यह प्रविष्ट किया जायेः

'Chapter VIII

Subordinate Courts

209A (1) Appointments of persons to be, and the posting and promotion of, district judges in any State shall be made by the Governor of the State in consultation with the High Court exercising jurisdiction in relation to such State.

Appointments of District Judges.

(2) A person not already in service of the Union or of the State shall only be eligible to be appointed as district judge if he has been for not less than seven years an advocate or a pleader and is recommended by the High Court for appointment.

209B. Appointments of persons other than district judges to the judicial service of a State shall be made by the Governor in accordance with rules made by him in this behalf after consultation with the state Public Service Commission and with the High Court.

Recruitment of other than district judges to the Judicial service.

209C. The control over district courts and courts subordinate thereto including the posting and promotion of, and the grant of leave to, persons belonging to the judicial service of a State and holding any post inferior to the post of district judge shall be vested in the High Court but nothing in this article shall

Control over sub-ordinate Courts.

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

be construed as taking away from any such person the right of appeal which he may have under the law regulating the conditions of his service or as authorising the High Court to deal with him otherwise than in accordance with the conditions of his service prescribed under such law.

209D. (1) In this Chapter—

Interpretation.

(a) the expression "district judge" includes judge of a city civil court, additional district judge, joint district judge, assistant district judge, chief judge of a small cause court, Chief Presidency magistrate additional chief presidency magistrate, sessions judge, additional sessions judge and assistant sessions judge;

(b) the expression "judicial service" means a service consisting exclusively of persons intended to fill the post of district judge and other civil judicial posts inferior to the post of district judge.

209E. The Governor may by public notification direct that the foregoing provisions of this Chapter and any rules make thereunder shall with effect from such date as may be fixed by him in this behalf apply in relation to any class or classes of magistrate in the State as they apply in relation to persons appointed to the judicial service of the State subject to such exceptions and modifications as may be specified in the notification.'"

Application of the provisions of this Chapter to certain classes of Magistrates.

[7अध्याय 8—अधीन न्यायालय

[209-क. (1) किसी राज्य में जिला न्यायाधीश नियुक्त होने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति तथा उनकी पद स्थापना और पदोन्नति ऐसे राज्य के संबंध में क्षेत्राधिकार प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करके राज्य का राज्यपाल करेगा।

जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति

(2) कोई व्यक्ति जो संघ की या राज्य की सेवा में पहले से ही नहीं लगा हुआ है, जिला न्यायाधीश होने के लिये केवल तभी पात्र होगा जब कि वह सात से अन्यून वर्षों तक अधिवक्ता या वकील रह चुका है तथा उसकी नियुक्ति के लिये उच्च न्यायालय ने सिफारिश की है।

209-ख. जिला न्यायाधीशों से अन्य व्यक्तियों को राज्य की न्यायिक सेवा में नियुक्ति राज्यपाल द्वारा, राज्य लोक सेवा आयोग तथा उच्च न्यायालय से परामर्श के पश्चात् उसके द्वारा इसलिये बनाये गये नियमों के अनुसार की जायेगी।

न्यायिक सेवा में जिला न्यायाधीशों से अन्य व्यक्तियों की भर्ती।

209-ग. जिला न्यायाधीशों के पद से निचले किसी पद को धारण करने वाले राज्य की न्यायिक सेवा के व्यक्तियों की पद-स्थापना, पदोन्नति और उनको छुट्टी देने के सहित जिला न्यायालयों तथा उनके अधीन न्यायालयों का नियंत्रण उच्च न्यायालयों में निहित होगा, किन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ नहीं किया जायेगा कि मानो वह ऐसे किसी व्यक्ति से उस अपील के अधिकार को छीनती है जो कि उसकी सेवा की शर्तों का विनियमन करने वाली विधि के अधीन उसे प्राप्त है अथवा उच्च न्यायालय को अधिकार देती है कि वह उसकी सेवा की ऐसी विधि के अधीन विहित शर्तों के अनुसरण से अन्यथा उससे व्यवहार करे।

अधीन न्यायालयों पर नियंत्रण।

209-घ. (1) इस अध्याय में–

(क) "जिला न्यायाधीश" पदावली के अन्तर्गत नगर-व्यवहार-न्यायालय का न्यायाधीश, अपर जिला न्यायाधीश, संयुक्त जिला न्यायाधीश, सहायक जिला न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश, मुख्य प्रेसीडेन्सी दंडाधिकारी, अपर मुख्य प्रेसीडेंसी दंडाधिकारी, सत्र न्यायाधीश, अपर सत्र न्यायाधीश और सहायक सत्र न्यायाधीश भी हैं।

निर्वचन।

(ख) "न्यायिक सेवा" पदावली से ऐसी सेवा अभिप्रेत है, जो केवल ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनी है, जो जिला न्यायाधीश के पद तथा जिला-न्यायाधीश-पद से निचले अन्य व्यवहार न्यायिक पदों को भरने के लिये उद्दिष्ट है।

209-ङ. राज्यपाल सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि इस अध्याय के पूर्वगामी उपबन्ध तथा उनके अधीन बनाये गये कोई नियम ऐसी तारीख से जो कि वह उस बारे में नियम करे, राज्य के किसी प्रकार या प्रकारों के दंडाधिकारियों के संबंध में ऐसे अपवादों और रूपभेदों के अधीन रहकर, जैसे कि अधिसूचना में उल्लिखित हों, वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे राज्य की न्यायिक सेवा में नियुक्त व्यक्तियों के संबंध में लागू होते हैं।]

कुछ प्रकारों के दंडाधिकारियों पर इस अध्याय के उपबन्धों का लागू होना।

श्रीमान्, इन उपबन्धों के दो उद्देश्य हैं। पहला उद्देश्य जिला न्यायाधीशों तथा अधीन न्यायाधीशों की नियुक्ति तथा उनकी अर्हता के बारे में उपबन्ध रखना है। दूसरा उद्देश्य सारी व्यवहार-न्यायपालिका को उच्च न्यायालय के नियंत्रण में रखना है। अनुच्छेद 209-क, 209-ख, और 209ग के सामान्य उपबन्धों में केवल दंडाधीशों के संबंध में अपवाद किया गया है और इसका उल्लेख अनुच्छेद 209-ङ में है।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

यदि मसौदा-समिति सभा से यह सिफारिश कर सकती कि संविधान के प्रवर्त्तन में आते ही उच्च न्यायालय द्वारा व्यवहार-न्यायपालिका की नियुक्ति तथा उस पर नियंत्रण रखने के संबंध में जो उपबन्ध हैं वे दंडाधीशों के संबंध में भी लागू होंगे तो उसे बड़ी प्रसन्नता होती। किन्तु यह अनुभव किया गया है, और यह अनुभव करना ही चाहिये, कि दंडाधीशों का सामान्य प्रशासन-प्रणाली से घनिष्ट संबंध है। हमें आशा है कि न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के संबंध में कुछ प्रान्त जिन प्रस्तावों पर विचार कर रहे हैं उन्हें अन्य प्रान्त भी स्वीकार कर लेंगे ताकि अनुच्छेद 209ङ के उपबन्ध दंडाधीशों पर उसी प्रकार लागू हो जायें जैसे हम उन्हें व्यवहार-न्यायपालिका पर लागू कर रहे हैं। किन्तु न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के प्रस्तावों के प्रवर्त्तन में आने के लिये कुछ समय देना आवश्यक है। यह अनुभव किया गया है कि सबसे अच्छा यह होगा कि इस मामले को राज्यपाल के लिये छोड़ दिया जाये और जैसे ही किसी प्रान्त में न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के संबंध में कोई कार्यवाही की जाये वैसे ही लोक-अधिसूचना निकाल कर वह इस कार्य को सम्पन्न करे। मेरे विचार से अब इसकी आवश्यकता नहीं है कि मैं और अधिक कुछ कहूं। इसमें कोई क्रान्तिकारी बात नहीं है। 1935 के अधिनियम में भी व्यवहार-न्यायपालिका की नियुक्ति तथा उस पर नियंत्रण की शक्ति उच्च न्यायालय में निहित थी। इस मसौदे में हम केवल उसी प्रथा को जारी रख रहे हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** मेरा एक संशोधन है जो इसका विकल्प है। वह संशोधनों की मिली जुली सूची का संशोधन संख्या 166 है।

***अध्यक्ष:** मैं उसे इन संशोधनों के बाद उठाऊंगा। संशोधन संख्या 21। श्री कुलाधर चालिहा।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "ऊपर के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-क के खण्ड (2) में 'seven years' (सात वर्ष) शब्दों के बाद 'enrolled as' (सूचीबद्ध) शब्द रखे जायें और 'pleader' (वकील) शब्द के बाद (हिन्दी में पहले) 'of the High Court of the State or States exercising jurisdiction' (क्षेत्राधिकार रखने वाले राज्य अथवा राज्यों के उच्च न्यायालय का) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, इस संशोधन को मैंने इस कारण उपस्थित किया है कि जब तक किसी वकील ने उस प्रान्त में वकालत न की हो जहां वह न्यायाधीश नियुक्त होने जा रहा हो तब तक उसे वहां के रीति-रिवाजों को समझने में बहुत कठिनाई होगी। अंग्रेजों के शासन के आरम्भ काल में जब हमारे यहां आईसीएम के अधिकारी नियुक्त किये गये तो परिणाम बहुत विचित्र हुआ। जब किसी प्रान्त में बाहर के लोगों को अधिकारी पदों पर नियुक्त किया गया तो तब भी यही परिणाम हुआ।

मैं इससे अन्य प्रान्तों के वकीलों को आने से नहीं रोक रहा हूं। वे आयें और वकालत करें। मैं केवल यह कह रहा हूं कि प्रान्त में उनका निवास काल कम से कम सात वर्ष का होना चाहिये। मैं बताऊंगा कि बाहर के लोगों को नियुक्त करने का परिणाम क्या होता है। देश के जिस भाग में मैं रहता हूं वहां का एक रिवाज इस प्रकार है:

नये वर्ष के दिन नवयुवक बाहर निकल कर नाचते गाते हैं और कुछ समय तक खेलते कूदते हैं और फिर किसी नदी या झरने के किनारे किसी लड़की को जबरदस्ती उठा कर ले जाते हैं। एक बार लड़कियों के माता-पिताओं ने यह शिकायत की कि उनकी लड़कियां भगाई गई हैं। दोषियों को न्यायाधीशों ने बड़े कठोर दंड दिये क्योंकि वे नहीं जानते थे कि वहां का जीवन किस प्रकार का है। कुछ समय पश्चात् सरकार को इस आशय की गश्ती चिट्ठियां निकालनी पड़ी कि इस प्रकार के मामलों में समझौता करने की आज्ञा मिलनी चाहिये। सम्भवत: अन्य प्रान्तों में यह बहुत बड़ा अपराध समझा जाये और अपराधी को चार वर्ष से सात वर्ष तक का कठोर कारावास का दंड दिया जाये। हमारे देश में इस प्रकार के मामलों में पहले आरम्भिक जांच होनी चाहिये और समझौते के लिये अवसर दिया जाना चाहिये। यह देखा गया है कि माता-पिता को थोड़ा बहुत संतुष्ट करने के पश्चात् ऐसे 99 प्रतिशत मामलों में समझौता हो गया। इसी प्रकार विवाह के संबंध में भी हमारे यहां बहुत ही सरल प्रथा है और वह यह है कि गठबन्धन किया जाता है और गांव में जो लोग उपस्थित होते हैं वे आशीर्वाद देते हैं। इतने से विवाह सम्पन्न हो जाता है। जो लोग बंगाल से अथवा अन्य प्रान्तों से आये हैं, अथवा जो यूरोपियन आते हैं वे हिन्दू-विधि तथा और बातें पढ़े होते हैं। वे अपने देशों की कठोर विधियों को प्रयोग में लाते हैं जिसका परिणाम यह हुआ कि विवाह की प्रथा का ही निराकरण हो गया है। यह उड़ीसा अथवा बिहार में भी हो सकता है। सम्भव है लोग रांची तथा अन्य स्थानों की प्रथाओं को न जानें और गलती करें। किसी अन्य प्रान्त के किसी आदमी को मैंने अपने प्रान्त के उच्च न्यायालय में वकालत करने से नहीं रोका है। मैं केवल इस पर जोर देता हूं कि उन्हें वहां सात वर्ष तक रहना चाहिये ताकि वे उस देश की प्रथाओं से परिचित हो सकें। और इस प्रकार जिला-न्यायाधीश होने की अर्हता प्राप्त कर सकें।

निर्वचन-संबंधी खण्ड से मामला पेचीदा हो गया है क्योंकि उसमें न केवल जिला न्यायाधीश सम्मिलित हैं बल्कि अपर-जिला-न्यायाधीश तथा सहायक-सत्र-न्यायाधीश भी सम्मिलित हैं। उन्हें ऐसे मामलों को निबटाना होगा जिनका केवल स्थानीय महत्व होगा। इसलिये यदि किसी अधिवक्ता अथवा वकील ने किसी ऐसे प्रान्त के उच्च न्यायालय में वकालत का पेशा न किया हो जहां वह न्यायाधीश नियुक्त होने जा रहा हो तो न्याय नहीं हो सकेगा। मेरा संशोधन एक सीधा-सादा संशोधन है और यदि मसौदा समिति उसे स्वीकार कर लेगी तो उसके कारण कोई हानि नहीं होगी।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-ङ में जहां 'may' (दे सकेगा) शब्द पहली बार आया है वहां उसके बाद (हिन्दी में पहले) 'at any time' (किसी समय) शब्द रखे जायें।"

***अध्यक्षः** आप संशोधन संख्या 22 नहीं उपस्थित कर रहे हैं?

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** मैं 22वां नहीं उपस्थित कर रहा हूं, 23वां और 24वां उपस्थित कर रहा हूं।

श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-ङ के अन्त में यह परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that the Governor or the Ruler as the case may be shall,—

(i) in the case of States mentioned in Part I of the first Schedule after the lapse of three years from the commencement of this Constitution if the Legislature of the State passes a resolution recommending the making of such direction, or if no such resolution is passed after the lapse of ten years from the commencement of this Consitution; and

(ii) in the case of States mentioned in Part III of the First Schedule after the lapse of seven years from the commencement of this Constitution, if the Legislature of the State passes a resolution recommending the making of such direction and if no such resolution is passed, after the lapse of ten years from the commencement of this Constitution, by public notification make such directions.'"

[परन्तु राज्यपाल अथवा राजप्रमुख–

(1) प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में, इस संविधान के आरम्भ से तीन वर्ष पश्चात्, यदि राज्य का विधान-मंडल कोई ऐसा प्रस्ताव पारित करे जिसमें इस प्रकार के निदेश की सिफारिश की गई हो, अथवा यदि कोई ऐसा प्रस्ताव पारित नहीं किया गया हो, तो इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष पश्चात्; और

(2) प्रथम अनुसूची के भाग (3) में उल्लिखित राज्यों के संबंध में इस संविधान के प्रारम्भ से सात वर्ष पश्चात् यदि राज्य का विधान-मंडल कोई ऐसा प्रस्ताव पारित करे जिसमें इस प्रकार के निदेश की सिफारिश की गई हो और यदि कोई ऐसा प्रस्ताव पारित न किया

गया हो तो इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष पश्चात्, लोक-अधिसूचना द्वारा ऐसे निदेश देगा।]

श्रीमान्, संशोधन संख्या 24 के पैरा (1) को पढ़ते समय मुझे उसमें एक गलती मालूम हूई है। मुझे इसका खेद है। "दस" शब्द के स्थान पर "पांच" होना चाहिये। जहां तक मुझे स्मरण है, मैंने मूल संशोधन में "पांच" शब्द ही रखा था। गलती से सम्भव है मैंने "दस" शब्द लिख दिया हो। मैं "पांच" शब्द लिखना चाहता था। मैं कह नहीं सकता कि मूल संशोधन में "पांच" शब्द था या "दस"। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इसे संशोधित करके "पांच" शब्द रख दिया जाये।

***अध्यक्षः** अच्छी बात है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** श्रीमान्, इस संशोधन का प्रभाव यह होगा कि यह राज्यपाल की स्वेच्छा पर निर्भर रहेगा कि वह अनुच्छेद 209ङ में कल्पित निदेश को दे या न दे। मैं यह चाहता हूं कि यदि प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्यों के विधान-मण्डल तीन वर्ष के अन्दर सिफारिश करें तो राज्यपाल उस सिफारिश को प्रयोग में लाने के लिये बाध्य हो और यदि वे कोई सिफारिश न करें तो पांच वर्ष पश्चात् अनुच्छेद 209-ङ में कल्पित निदेश को प्रयोग में लाने के लिये राज्यपाल बाध्य होगा। इसी प्रकार प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में यदि सात वर्ष बीतने तक विधान-मंडल कोई सिफारिश न करे तो दस वर्ष के पश्चात् राजप्रमुख निदेश देने के लिये बाध्य होगा। पहले सात वर्षों में विधान-मंडल इस निदेश को प्रयोग में लाने के बारे में सिफारिश कर सकता है।

श्रीमान्, न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने का प्रश्न बहुत पुराना है। जब यहां विदेशियों का प्रभुत्व था तो भारतीय कांग्रेस ने मुख्यतः इसी आधार पर कई प्रस्ताव स्वीकार किये थे। देश के लोग यह आशा लगाये बैठे थे कि स्वातंत्र्य-प्राप्ति के पश्चात् यह सुधार जो बहुत पहले हो जाना चाहिये था यथाशक्य शीघ्र कर दिया जायेगा। निदेशक सिद्धान्तों को स्वीकार करते समय हमने उनमें इस प्रकार की एक सिफारिश भी सम्मिलित की थी। अब अनुच्छेद 209-ङ को पढ़ते समय प्रत्येक व्यक्ति इस पर विचार करेगा कि किसी न किसी समय राज्यपाल इस आशय का निदेश निकालेगा। अनुच्छेद 209ङ में केवल एक पवित्र इच्छा प्रकट की गई है। जब डॉ. अम्बेडकर ने इसे उपस्थित किया तो उन्होंने कहा कि इस अध्याय में कोई क्रांतिकारी बात नहीं है। मेरे विचार से उन्होंने ठीक ही कहा किन्तु दुर्भाग्य से इसमें कोई बात विकासकारी भी नहीं है। स्वराज्य प्राप्त होने पर हम यह चाहते थे कि न्यायपालिका को कार्यपालिका के नियंत्रण से हटा दिया जाये और लोगों के प्रति न्याय हो। यदि यह यथाशक्य शीघ्र नहीं होने जा रहा है तो मेरा निवेदन है कि स्थिति को ठीक ठीक समझा जाये। वास्तव में मैंने जो अवधि विहित की है वह इस सुधार के लिये पहले अधिक से अधिक अवधि समझी गई थी।

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

इस समय क्या होता है यह इस सभा के सभी सदस्यों को विदित है। इस समय दंडाधीश जिला दंडाधीशों के नियंत्रण में है जो जिलों में पुलिस के मुख्य अधिकारी भी होते हैं। इसलिये लोगों के प्रति समान न्याय के लिये भी जिस स्वाधीनता तथा निरपेक्षता की आवश्यकता होती है वह भी दंडाधीशों को प्राप्त नहीं है। जिला दंडाधीश, जिसमें सभी शक्तियों को संकेन्द्रण है, यदि दंडाधीशों को ठीक करना चाहे तो उन्हें अपने न्यायालय में ही बुला सकता है। दंडाधीशों की पदोन्नति पुलिस की सिफारिश के आधार पर होती है और यदि पुलिस उसके विरुद्ध कुछ कहती है तो उससे उसकी पदोन्नति में बाधा पहुंचती है।

***अध्यक्षः** क्या इस प्रकार के तर्कों की आवश्यकता है? यहां कोई व्यक्ति ऐसा नहीं है जो यह कहता हो कि इस प्रकार का पृथक्करण नहीं होना चाहिये। प्रश्न केवल सुविधा और समय का है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** केवल यहीं तक अपने तर्क को सीमित रख कर मैं केवल यह निवेदन करूंगा कि मुझे यह ज्ञात है कि भारत में कुछ भाग ऐसे भी हैं जहां, जैसा कि इन शब्दों का आशय है, विधि का शासन अब स्थापित होने जा रहा है। इन भागों के संबंध में मैंने दस वर्ष की अवधि रखी है अन्यथा बंबई, मद्रास और संयुक्तप्रान्त में तथा अन्य प्रान्तों के कुछ भागों में यह सुधार अभी भी किया जा सकता है। इसलिये भाग (1) में जिन क्षेत्रों का उल्लेख है उनके लिये मैंने तीन वर्ष की अवधि रखी है और भाग (2) में जिन राज्यों का उल्लेख है उनके लिये अन्ततोगत्वा पांच वर्ष, सात वर्ष और दस वर्ष की अवधि रखी है। मैं नम्रतापूर्वक निवेदन करता हूं कि यदि हम इस संशोधन को भी स्वीकार नहीं करेंगे तो इसका अर्थ यह होगा कि अनुच्छेद 209-ङ में एक पवित्र इच्छा ही व्यक्त रहेगी और वह केवल एक निदेशक सिद्धान्त ही रहेगा। इसे मृग-मरीचिका के रूप में रखने का कोई अर्थ नहीं है। जब हमने निदेशक सिद्धान्त पारित किये थे तो मुझे स्मरण है कि सभा में एक कलह उत्पन्न हो गया था। कुछ लोग यह चाहते थे कि वह तुरंत ही प्रभावी हों और कुछ यह कहते थे कि उन्हें प्रभाव में लाने का समय अभी नहीं आया है। इसलिये एक मध्य वर्ग निकालने की दृष्टि से मैंने इन सारों तथा इस अवधि का सुझाव रखा है। यदि डॉ. अम्बेडकर मेरे इस संशोधन को स्वीकार कर लें तो मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।

***अध्यक्षः** संशोधन संख्या 117—सदस्य महोदय सभा में नहीं हैं। पंडित कुंजरू!

***पं. हृदयनाथ कुंजरूः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

> "सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-क के खण्ड (1) में से 'and the posting and promotion of' (तथा उनकी पद-स्थापना और पदोन्नति) शब्द निकाल दिये जायें।"

आपकी अनुमति से मैं यह प्रस्ताव भी उपस्थित करता हूं कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-ग में 'grant of leave to' (छुट्टी देने) शब्दों के पश्चात् (हिन्दी में अनुच्छेद के आरम्भ में) 'district judges in any state and' (किसी राज्य के जिला-न्यायाधीश और) शब्द रखे जायें।"

मेरे संशोधनों का उद्देश्य यह है कि उच्च न्यायालय जिला-न्यायाधीशों की बदली तथा पदोन्नति के लिये उसी प्रकार उत्तरदायी हों जैसे वे अधीन न्यायाधीशों और अधीन न्यायिक पदाधिकारियों की बदली और पदोन्नति के लिये उत्तरदायी हैं। मेरे संशोधनों का नियुक्ति के प्रश्न से कोई संबंध नहीं है। राज्यपाल उच्च न्यायालय से परामर्श करके जिला-न्यायाधीशों को नियुक्त करेगा। मैं केवल यह चाहता हूं कि जिला न्यायाधीश राज्यपाल द्वारा नियुक्त होने के पश्चात् उच्च न्यायालय के नियंत्रण में रहे। मुझे अपने संशोधन के लिये मसौदा समिति के सभापति जैसे व्यक्ति अर्थात् मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर का समर्थन प्राप्त है। अनुच्छेद 209-क तथा अनुच्छेद 209-ग की भाषा.....

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** वे सभी प्रयोगात्मक हैं। आप इस विषय पर अपने शब्द नष्ट न करें।

***पं. हृदयनाथ कुंजरू:** पिछले सत्र में मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने जिन अनुच्छेदों की सूचना दी थी, और जो छपे हुए संशोधनों के अंक 1 के अन्त के पृष्ठ के पहले पृष्ठ पर छपे हुए हैं, उनसे उद्धरण देने तथा उनकी ओर संकेत करने का मुझे अधिकार है। यदि मैं कोई ऐसी बात कहूं जो गलत हो तो मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर अवश्य ही उसका खण्डन करेंगे। किन्तु मेरी समझ में नहीं आता कि मैं उस संशोधन का हवाला क्यों न दूं, जिसकी उन्होंने सूचना दी थी और जिसे मैं एक उपयुक्त संशोधन समझता हूं। डॉ. अम्बेडकर ने हमें नहीं बताया है कि उन्होंने अपने पहले के संशोधनों की शब्दावली का परित्याग क्यों किया है। उनमें यह उपबंधित था यद्यपि जिला-न्यायाधीशों की नियुक्ति पर राज्यपाल का नियंत्रण होना चाहिये किन्तु उनकी पदोन्नति और बदली पर उच्च न्यायालय का नियंत्रण होना चाहिये। मेरे विचार से उच्च न्यायालय का उन सभी पदाधिकारियों पर नियंत्रण होना चाहिये जिनका न्यायिक प्रशासन से संबंध हो। जिला न्यायाधीश न्यायिक पदाधिकारी हैं। इसलिये कोई कारण नहीं है कि उनकी बदली तथा पदोन्नति पर नियंत्रण रखने की शक्ति उच्च न्यायालय को न दी जाये। मेरे विचार से यदि उच्च न्यायालय इसके लिये उत्तरदायी ठहराये गये तो न्यायिक प्रशासन में सुधार होगा। हमने पहले कई बार यह देखा है कि जिला-न्यायाधीशों के पद-स्थापना तथा पदोन्नति पर उच्च न्यायालयों का नियंत्रण न होने के कारण उनका प्राधिकार अशक्त हो गया और न्यायिक प्रशासन भी अशक्त हो गया। जिला न्यायाधीश यह समझते थे कि उच्च न्यायालय का उन पर नियंत्रण नहीं है और कार्यपालिका का मुंह ताकते रहते थे। मेरे कहने का अर्थ यह नहीं है कि कोई भी जिला-न्यायाधीश विधि के उपबन्धों की परवाह नहीं करता था अथवा जिला-

[पं. हृदयनाथ कुंजरू]

न्यायाधीश हमेशा कार्यपालिका की सुविधा को देख कर ही मामलों का निर्णय करते थे। किन्तु, मेरे विचार से, यदि किसी वकील से पूछा जाये तो वह यही कहेगा कि विभिन्न लोगों की संस्थाओं ने बराबर यही मांग की कि जिला-न्यायाधीशों को उच्च न्यायालय के नियंत्रण में रखना चाहिये। उन्होंने यह मांग तक की कि उनकी नियुक्ति भी उच्च न्यायालय ही करे। मैं यह नहीं कहता। मेरे संशोधन में पुराने विचारों का पोषण किया गया है। उनका उद्देश्य केवल यह है कि उच्च न्यायालय जिला-न्यायाधीशों की बदली तथा पदोन्नति उसी प्रकार करे जैसे वह अधीन न्यायाधीशों की करता है।

यह विचार किया जा सकता है कि पदोन्नति के प्रश्न के कारण कुछ कठिनाई हो सकती है। यह समझा जा सकता है कि इसका अर्थ केवल यह है कि जिला-न्यायाधीश की पदोन्नति करके उसे उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बना दिया जायेगा। किन्तु इसका यह अर्थ नहीं है। हम उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के संबंध में उस धारा में उपबन्ध रख चुके हैं जिसमें हमने उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करने की शक्ति का उल्लेख किया है। "पदोन्नति" शब्द का अर्थ इस स्थल पर केवल जिला-न्यायाधीशों की उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने से पहले की पदोन्नति है। अब न्यायाधीशों की पदोन्नति करके उन्हें एक श्रेणी से दूसरी श्रेणी में रखा जाता है। यदि वर्तमान श्रेणियां रहीं तो उच्च न्यायालय न्यायाधीशों की पदोन्नति इसी प्रकार कर सकेगा, जैसे इस समय कार्यपालिका करती है। इसलिये मेरे विचार से "पदोन्नति" शब्द से कोई कठिनाई नहीं होगी।

श्रीमान्, मैं यह कह चुका हूं कि मेरे संशोधनों का उद्देश्य यह नहीं है कि उच्च न्यायालय को जिला-न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिये उत्तरदायी बनाया जाये। मैं इस आशय का भी एक संशोधन रख सकता था कि उच्च न्यायालयों को यह शक्ति भी प्राप्त होनी चाहिये। सीलोन के संविधान की धारा 55 इस प्रकार है:

> "सभी न्यायिक पदाधिकारियों की नियुक्ति, बदली, पदच्युति तथा उन पर अनुशासन संबंधी नियंत्रण न्यायिक सेवा आयोग में निहित होगा।"

न्यायिक सेवा आयोग में मुख्य न्यायाधिपति, उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश और एक अन्य व्यक्ति जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश हो अथवा उसका न्यायाधीश रह चुका हो, होंगे। किन्तु, जैसाकि मैं कह चुका हूं, मेरे संशोधन का उद्देश्य यह नहीं है कि संविधान में सीलोन के संविधान का उपबन्ध प्रविष्ट किया जाये। उसके अधीन जिला-न्यायाधीशों की नियुक्ति की शक्ति सरकार को ही दी गई है और उनकी पदच्युति के संबंध में यह सुझाव रखा गया है कि उसका विनियमन जो नियम हों उनके अनुसार हो। इस प्रकार मेरा संशोधन एक बहुत ही उदार संशोधन है और उसके कारण कोई भी कठिनाई उत्पन्न नहीं होती। इसके

विपरीत, इसके फलस्वरूप उच्च न्यायालय को उन सभी पदाधिकारियों पर नियंत्रण रखने की शक्ति प्राप्त होने से, जो न्यायिक कर्तव्यों का पालन करेंगे, न्यायिक प्रशासन सुदृढ़ हो जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): श्रीमान्, क्या आप कृपा करके मुझे बोलने का अवसर फिर दे सकेंगे। जब मेरा नाम पुकारा गया था मैं दफ्तर के काम से बाहर गया हुआ था। किन्तु मुझे एक महत्वपूर्ण संशोधन उपस्थित करना है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अनुपस्थिति का बहाना नहीं टिक सकता।

***अध्यक्ष:** मुझे खेद है कि अब बहुत देर हो गई है।

***श्री आर.के. सिधवा:** मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि यह एक महत्वपूर्ण संशोधन है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का जब आपस में मतभेद होगा और....

***अध्यक्ष:** यह स्पष्ट करने के लिये नि:सन्देह आपको बोलना होगा। बिना बोले हुए आप यह कैसे स्पष्ट करेंगे?

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान्, मैं केवल दो मिनट लूंगा।

***अध्यक्ष:** अच्छी बात है। किन्तु कृपा करके दो मिनट से अधिक समय न लें।

***श्री आर.के. सिधवा:** अध्यक्ष महोदय, मुझे अपना संशोधन उपस्थित करने का अवसर देने के लिये मैं आपको धन्यवाद देता हूं। मैं किसी निजी काम से नहीं बल्कि दफ्तर के काम से बाहर गया था। मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-क के खण्ड (1) के अन्त में यह जोड़ दिया जाये:

'where there is difference of opinion regarding an appointment between the Governor or Ruler of the State and the High Court, the opinion of the former shall prevail.'"

[जब कभी किसी नियुक्ति के संबंध में राज्य के राज्यपाल अथवा राजप्रमुख और उच्च न्यायालय के बीच मतभेद हो तो राज्यपाल अथवा राजप्रमुख का मत प्रभावी होगा।]

मेरे संशोधन का आशय उसी से स्पष्ट हो जाता है। यह सुझाव रखा गया है कि तीन अभिकरणों का अर्थात् सरकार का जिसमें मंत्रिमंडल अथवा गृह मंत्री सम्मिलित होगा, राज्यपाल का और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों का मत लिया जायेगा। यदि राज्यपाल और सरकार सहमत हों, और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सहमत न हों, तो इस दशा में मेरे संशोधन के अनुसार सरकार तथा राज्यपाल

[श्री आर.के. सिधवा]

की सम्मति प्रभावी होगी। श्रीमान्, यह उचित ही है क्योंकि सभी शक्ति उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को ही प्राप्त नहीं होनी चाहिये। सरकार तथा राज्यपाल का मत प्रभावी होना चाहिये। इन शब्दों के साथ मैं सिफारिश करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जाये।

***अध्यक्ष:** छपी हुई सूची के अंक 1 में डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद 209-क, 209-ख और 209-ग छपे हुए हैं और इन्हीं मूल अनुच्छेदों के संबंध में प्रोफेसर शिब्बनलाल सक्सेना ने कई संशोधनों की सूचना दी थी। चूंकि ये अनुच्छेद उपस्थित नहीं किये गये हैं इसलिये इनके स्थान पर किन्हीं अन्य बातों को रखने का प्रश्न नहीं उठता।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान्, पहले आपने इस प्रकार के संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा दी है।

***अध्यक्ष:** किन्तु आपने तथा अन्य सदस्यों ने अनुच्छेद के शब्दों के स्थान पर अन्य शब्द रखने के प्रस्ताव की सूचना दी थी। अब उन्होंने उस नवीन अनुच्छेद की सूचना दी है जो इस समय सभा के विचाराधीन है। आप अपने संशोधनों की सूचना भी दे सकते थे। जब कभी कोई सारवान प्रश्न उठाया गया और तत्संबंधी प्रस्तावित संशोधनों की यथा समय सूचना नहीं दी गई, मैंने संशोधनों को उपस्थित करने की आज्ञा दे दी। किन्तु डॉ. अम्बेडकर ने जो संशोधन उपस्थित किया है, और जो इस समय विचाराधीन है, उसकी सूचना सदस्य महोदय को बहुत पहले दे दी गई थी।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** कई ऐसे संशोधनों पर संशोधन उपस्थित करने की आज्ञा दी गई है जो उपस्थित नहीं किये गये थे।

***अध्यक्ष:** उन्हें प्रविष्ट किया जा सकता था। इसी कारण उन्हें उपस्थित करने की आज्ञा दी गई होगी। किन्तु डॉ. अम्बेडकर ने इस संशोधन की सूचना बहुत पहले दे दी थी और कई सदस्यों ने इस पर संशोधन भी उपस्थित किये हैं। इसलिये मैं उसे उपस्थित करने की आज्ञा नहीं दे सकता। किन्तु यदि आप उसके संबंध में बोलना चाहते हैं तो आप बोल सकते हैं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** जी हां, श्रीमान्, मैं बोलना चाहता हूं। इस अनुच्छेद के स्थान पर मैं जो कुछ रखना चाहता था उसे मैं पुरानी सूची के अपने संशोधन संख्या 106 में व्यक्त कर चुका हूं। जहां तक वर्तमान मसौदे का संबंध है, डॉ. अम्बेडकर यह स्वयं कह चुके हैं कि दंडाधिकारी उच्च न्यायालय के अधीन नहीं होंगे। मुझे इसकी प्रसन्नता है कि उन्होंने साफ-साफ यह स्वीकार किया है कि अनुच्छेद 15-क में वे "यथोचित-विधि प्रणाली" शब्द रखना चाहते थे किन्तु वे उन्हें नहीं रख सके। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि न्यायपालिका को पूर्णतया उच्च न्यायालय के अधीन रखना चाहते थे परन्तु वे यह भी नहीं कर सके। इच्छा

न होते हुए भी उन्होंने गृह-मंत्रालय को संतुष्ट करने के लिये हमारे सामने समझौते से तय किये गये प्रस्ताव रखे हैं। मैं जानता हूं कि क्या कठिनाइयां हैं, किन्तु चूंकि हम यह संविधान आने वाली पीढ़ियों के लिये बना रहे हैं इसका कम से कम उल्लेख रहना चाहिये कि हम गृह मंत्रालय के विचारों से सहमत नहीं हैं, चाहे वह केन्द्र का गृह मंत्रालय हो अथवा प्रान्तों का। अनुच्छेद 15 तथा 15-क द्वारा वैयक्तिक स्वातंत्र्य पूर्णतया निराकृत हो जाता है। संविधान का सबसे विकृत अंग यही हैं। डॉ. अम्बेडकर ने जिस अनुच्छेद 209-ङ का प्रस्ताव रखा है उससे हम उस सिद्धांत का निराकरण कर रहे हैं जिसे हमने निदेशक सिद्धांतों के प्रकरण में स्वीकार किया है। वह सिद्धांत न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने का है। यद्यपि हमने यह सिद्धांत निर्धारित किया है किन्तु मेरी यह धारणा है कि हम उसे प्रयोग में नहीं लाना चाहते। मूल अनुच्छेद में तीन वर्ष की कालावधि रखी गई थी और प्रधानमंत्री महोदय ने कहा था कि यह कार्य तीन वर्ष से पूर्व ही सम्पन्न हो जायेगा अब यद्यपि श्री भार्गव ने दस वर्ष की अवधि का प्रस्ताव रखा है किन्तु उसे भी स्वीकार नहीं किया जा रहा है।

इसलिये मेरी यह धारणा है कि मसौदा-समिति गृह मंत्रालय को न्यायपालिका और कार्यपालिका के पृथक्करण के संबंध में सहमत नहीं करा सकी है। वर्तमान उपबन्धों से व्यक्ति की नागरिक स्वतंत्रताओं का पूर्णतया अपहरण हो जाता है। मैंने अपने संशोधन में यह सुझाव रखा था कि अन्ततोगत्वा उच्चतम न्यायालय और मूल्य न्यायाधिपति ही लोगों की स्वतंत्रताओं के संरक्षक होने चाहियें और उच्च न्यायालय तथा अधीन न्यायाधीश भी उन्हीं के नियंत्रण के अधीन होने चाहियें। किन्तु यह अनुच्छेद वास्तव में भारत शासन अधिनियम से उसी रूप में ले लिया गया है और इसमें न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के संबंध में कोई उपबन्ध नहीं है। यदि इस प्रकार के उपबन्ध को प्रविष्ट किया गया तो मेरे विचार से बिना संविधान का संशोधन किये हुए यह पृथक्करण नहीं किया जा सकेगा। इन उपबन्धों को रखने के पश्चात् मेरे विचार से कोई भी प्रान्त न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने की चिन्ता नहीं करेगा। श्री भार्गव ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसमें कहा गया है कि कम से कम कुछ प्रान्तों में यह पृथक्करण शीघ्र हो जाना चाहिये और अन्य प्रान्तों में तीन, पांच या दस वर्ष में हो जाना चाहिये। वह संशोधन भी स्वीकार नहीं किया गया है। इसका अर्थ यह है कि सभी प्रान्तों के गृह-मंत्रालय इस प्रकार के पृथक्करण के पक्ष में नहीं हैं। यदि भारत की स्वतंत्र सरकार की भी यही धारणा है तो लोगों को किसी भी स्वतंत्रता की प्रत्याभूति नहीं रहेगी और हम उसी पुरानी शासन-प्रणाली के अधीन रहेंगे जो अभी तक प्रभावी रही है। अब भी सम्भवत: हम पुराने जमाने की ही बातें सोचते हैं। मुझे आशा है कि डॉ. अम्बेडकर यह समझेंगे कि समझदारी की बात यही है कि श्री भार्गव का संशोधन स्वीकार कर लिया जाये और कम से कम समुन्नत प्रान्तों को शीघ्र ही न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने का अवसर दिया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान्, मेरे मित्र श्री सिधवा ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसका विरोध करने के लिये मैं अपनी जगह से उठा हूं। मेरा यह निश्चित

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

मत है कि जब कभी उच्च न्यायालय और सरकार मे मतभेद हो, उच्च न्यायालय का मत प्रभावी होना चाहिये।

इसके अतिरिक्त में "उच्च न्यायालय से परामर्श करके" शब्दों के भी पक्ष में नहीं हूं। मेरा यह निश्चित मत है कि नियुक्तियां, पद-स्थापना तथा पदोन्नति की शक्ति प्रान्तीय सरकारों को नहीं प्राप्त होनी चाहिये। मुझे ऐसे मामले ज्ञात हैं, जिन में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश केवल इस कारण पदच्युत किये गये, अथवा उनकी बदली की गई, कि उनकी कांग्रेस के कुछ ऐसे सदस्यों से नहीं पटी जो सरकार पर काफी प्रभाव डाल सकते थे। उच्च न्यायालयों की इस संबंध में प्रान्तीय सरकारों से बातचीत चली किन्तु उन्हें हताश होना पड़ा। इसलिये निश्चित रूप से मेरा यह मत है कि वर्तमान स्थिति को देखते हुए इस प्रकार शब्द के उपबन्ध की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता इसकी है कि प्रान्तीय प्रशासन के दोषों का शोधन किया जाये और उसे भ्रष्टाचार तथा पक्षपात से मुक्त किया जाये। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 209-ख के अंग्रेजी के इस आशय के शब्द "राज्य लोक सेवा आयोग तथा उच्च न्यायालय से परामर्श के पश्चात्" स्पष्ट नहीं है। मुझे अंग्रेजी का बहुत कम ज्ञान है। मैं नहीं समझ पाया हूं कि "राज्य लोक सेवा आयोग तथा उच्च न्यायालय से परामर्श के पश्चात्" अर्थ वाले अंग्रेजी के "नियमों" के संबंध में है अथवा "नियुक्तियों" के संबंध में। मैं नहीं समझ पाया कि राज्यपाल उच्च न्यायालय तथा लोक सेवा आयोग से परामर्श करके नियम बनायेगा अथवा नियुक्तियां करेगा। मेरा यह मत है कि लोक सेवा आयोग, तथा उच्च न्यायालयों से परामर्श करके नियम भी बनाये जायें और नियुक्तियां भी की जायें।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या मैं यह जान सकता हूं कि मेरे मित्र को अपनी ही सरकार तथा अपने ही राज्यपाल का विश्वास नहीं है?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मेरा प्रान्तीय स्वायत्तता पर बिल्कुल विश्वास नहीं है। इस सिद्धांत को मैं इस सभा में कई बार प्रकट कर चुका हूं। इसकी आवश्यकता नहीं है कि मैं पहले बताये हुए कारणों को फिर बताऊं।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): मुझे इसकी प्रसन्नता है कि आप यह अनुभव करते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** कुछ समय पश्चात् आप भी यही अनुभव करेंगे। मैं यह चाहता हूं कि नियुक्ति, पद-स्थापना तथा पदोन्नति के संबंध में दंडाधीश मंत्रिपरिषद् के अधीन न रहें। यह स्पष्ट शब्दों में निर्धारित कर देना चाहिये कि इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि से दो वर्ष के अन्दर यह सुधार कर दिया जाना चाहिये। इस अनुच्छेद में इसका स्पष्ट उल्लेख नहीं है कि यह सुधार कब किये जायेंगे। मैं अनुच्छेद 209-ङ का हवाला दे रहा हूं।

इस अनुच्छेद के साथ एक और निर्बन्धन रखा गया है। जो शब्द प्रयुक्त हैं वे ये हैं: "ऐसे अपवादों और रूपभेदों के अधीन रह कर जैसे कि अधिसूचना में उल्लिखित हों।" श्रीमान्, राजनैतिक शक्ति तथा पक्षपात की आकांक्षा पर आवरण डालने के लिये ही प्रशासन संबंधी कठिनाइयों का बहाना बनाया जाता है। मैं नहीं चाहता कि इस निर्बन्धन को इस अनुच्छेद में स्थान दिया जाये। मैं इस प्रकार के विचार इसी कारण रखता हूं कि प्रान्तीय प्रशासन को दोषों से मुक्त करने की आवश्यकता है। इससे वैयक्तिक स्वातंत्र्य स्वतः प्राप्त हो जायेगा। जिन सुधारों का मैंने सुझाव रखा है यदि उन्हें स्थान दिया गया तो उनसे राज्य की नींव सुदृढ़ होगी और भारत में सभी सरकारों के प्रति वफादारी की भावना जागृत होगी।

***श्री पी.एस. नटराज पिल्ले** (त्रावणकोर राज्य): श्रीमान्, एक सन्देह को दूर कराने के लिये ही मैं अपनी जगह से उठा हूं। मैं यह पूछना चाहता हूं कि क्या इस अनुच्छेद का उद्देश्य यह है कि अनुसूची 3 में उल्लिखित राज्यों पर अनुच्छेद 209-क के उपबन्ध लागू न हों, अथवा क्या वे उन पर लागू होंगे?

***श्री आर.के. सिधवा:** मेरे संशोधन में यह कहा गया है।

***श्री पी.एस. नटराज पिल्ले:** अनुच्छेद क, ख और ङ में "राज्य का राज्यपाल" शब्द प्रयुक्त हैं और "राजप्रमुख" शब्द नहीं रखा गया है। किन्तु पंडित ठाकुर दास भार्गव ने जो संशोधन उपस्थित किये थे उनमें से, मेरे विचार से, एक में यह सुझाव रखा गया था कि ये अनुच्छेद अनुसूची 3 में उल्लिखित राज्यों पर भी लागू होने चाहिये। मैं यह स्पष्टतया जानना चाहता हूं कि क्या ये अनुसूची 3 के राज्यों पर भी लागू होंगे और यदि लागू होंगे तो मैं चाहता हूं कि आवश्यक परिवर्तन किये जायें।

जहां तक श्री चालिहा के संशोधन का संबंध अधीन-न्यायपालिका से है मैं उसका भी समर्थन करना चाहता हूं। जहां तक मेरे राज्य का संबंध है वहां जो भूमि-संबंधी विधियां तथा विशेष रीतिरिवाज प्रचलित हैं उनके कारण और धन के आदान-प्रदान की भी जो प्रथा है उसके कारण भी इसकी आवश्यकता है कि उन वकीलों में से ही लोग नियुक्त किये जायें, जो वहां क्षेत्राधिकार रखने वाले उच्च न्यायालयों में वकालत करते हैं। यदि प्रयुक्त शब्द ही स्वीकार कर लिये गये तो किसी भी उच्च न्यायालय में वकालत करने वाले वकील किसी भी उच्च न्यायालय में नियुक्त किये जा सकते हैं। जब तक आप उच्च न्यायालयों के वकीलों की नियुक्ति को उसके क्षेत्राधिकार के जिला न्यायालयों तक ही सीमित नहीं करेंगे तब तक बहुत कठिनाइयां उठा खड़ी होंगी। मैं यह चाहता हूं कि इस सुझाव पर विचार किया जाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अन्त में बोलने वाले वक्ता महोदय ने जो कुछ कहा है उसके संबंध में मैं यह कहना चाहता हूं कि यह अध्याय प्रान्तीय संविधान का अंग होगा और बाद को भाग 3 में के राज्यों के संबंध में जो अंश है उसमें भी हम इसी प्रकार की भाषा रखने का प्रयास करेंगे।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

दो संशोधनों की व्याख्या की आवश्यकता है जिनमें से एक श्री चालिहा के नाम से है और दूसरा पंडित कुंजरू के नाम से है।

मुझे खेद है कि श्री चालिहा ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसे मैं दो कारणों से स्वीकार नहीं कर सकता। एक कारण यह है कि, जैसाकि उनके संशोधन का उद्देश्य है, हम विधि द्वारा किसी प्रकार की प्रान्तीयता को जन्म नहीं देना चाहते। इसके अतिरिक्त उनके संशोधन को स्वीकार करने से प्रान्त ही कठिनाई में पड़ जायेंगे, क्योंकि सम्भव है उन्हें ऐसे लोग मिलें जिनमें शिक्षा-संबंधी अर्हता हो, परन्तु सम्भव है ऐसे लोग न मिलें जो उच्च न्यायालय में नियुक्त होने की योग्यता रखते हों। मेरे विचार से अच्छा यह होगा कि इस संबंधित प्राधिकारी को आवश्यक अर्हता होने पर लोगों को नियुक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता दें। इसलिये मैं इस संशोधन को स्वीकार नहीं कर सकता।

मेरे मित्र पंडित कुंजरू ने जो संशोधन उपस्थित किया है उसमें, मेरे विचार से, एक छोटा प्रश्न उठाया गया है, और वह यह है कि क्या जिला-न्यायाधीशों की पदस्थापना और पदोन्नति राज्यपाल के हाथ में, अर्थात् सामयिक सरकार के हाथ में होनी चाहिये, अथवा इसका अनुच्छेद 209-ग में उल्लेख करके इसे उच्च न्यायालय को सौंप देना चाहिये। 1935 के भारत शासन अधिनियम में जो उपबन्ध था उसके अधीन जिला-न्यायाधीशों की नियुक्ति, पदस्थापना तथा पदोन्नति राज्यपाल ही करता था। जिला-न्यायाधीशों की नियुक्ति, पदस्थापना तथा पदोन्नति करने की शक्ति उच्च न्यायालय को नहीं प्राप्त थी। मेरे मित्र श्री कुंजरू ने देखा होगा कि हमने भारत शासन अधिनियम के उस उपबन्ध में बहुत रूपभेद किया है क्योंकि हमने यह शर्त रखी है कि जिला-न्यायाधीशों की नियुक्ति, पदस्थापना तथा पदोन्नति के संबंध में उच्च न्यायालयों से परामर्श किया जायेगा। इसलिये मतभेद केवल इस संबंध में है कि क्या जिला-न्यायाधीशों को छोड़कर अधीन-न्यायिक-सेवा के लोगों को ही पद स्थापना, पदोन्नति, छुट्टी आदि के संबंध में उच्च न्यायालयों को एकाधिकार प्राप्त हो अथवा क्या उन्हें इस विषय में जिला-न्यायाधीशों सहित सभी अधीन न्यायाधीशों के संबंध में क्षेत्राधिकार प्राप्त हो। मेरे विचार से हमने जिस बीच के मार्ग का अनुसरण किया है वह बहुत ही उपयुक्त है। अन्ततोगत्वा केवल इतना अन्तर रह जायेगा कि अधीन न्यायाधीशों के संबंध में पद स्थापना, पदोन्नति अथवा छुट्टी के बारे में उच्च न्यायालय अधिसूचना निकालेगा और जिला-न्यायाधीशों के संबंध में यह अधिसूचना सचिवालय निकालेगा। यदि आधारभूत अथवा सारवान बातों को देखा जाये तो कोई अन्तर नहीं है। जिला-न्यायाधीशों को उच्च न्यायालय का संरक्षण प्राप्त रहेगा क्योंकि उससे अवश्य ही परामर्श करना होगा। मेरे विचार से इससे सभी आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-क के खण्ड (2) में 'seven years' (सात वर्ष) शब्दों के बाद 'enrolled as' (सूचीबद्ध)

शब्द रखे जायें और 'pleader' (वकील) शब्द के बाद (हिन्दी में पहले) 'of the High Court of the State or States exercising jurisdictions' (क्षेत्राधिकार रखने वाले राज्य अथवा राज्य के उच्च-न्यायालय का) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-ङ में जहां 'may' (दे सकेगा) शब्द पहली बार आया है वहां उसके बाद (हिन्दी में पहले)'at any time' (किसी समय) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"ऊपर के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-ङ के अन्त में यह परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that the Governor or the Ruler as the case may be shall,—

(i) in the case of States mentioned in Part I of the First Schedule after the lapse of three years from the commencement of this Constitution, if the Legislature of the State passes a resolution recommending the making of such direction, or if no such resolution is passed after the lapse of ten years from the commencement of this Constitution; and

(ii) in the case of States mentioned in Part III of the First Schedule after the lapse of seven years from the commencement of this Constitution, if the Legislature of the State passes a resolution recommending the making of such direction and if no such resolution is passed, after the lapse of ten years from the commencement of this Constitution, by public notification make such directions.'"

[परन्तु राज्यपाल अथवा राजप्रमुख–

(1) प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्यों के संबंध में, इस संविधान के प्रारम्भ से तीन वर्ष पश्चात्, यदि राज्य का विधान-मंडल कोई ऐसा प्रस्ताव पारित करे जिसमें इस प्रकार के निदेश की

[अध्यक्ष]

सिफारिश की गई हो, अथवा यदि कोई ऐसा प्रस्ताव पारित नहीं किया गया हो, तो इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष पश्चात् और–

(2) प्रथम अनुसूची के भाग (3) में उल्लिखित राज्यों के संबंध में, इस संविधान के प्रारम्भ से सात वर्ष पश्चात् यदि राज्य का विधान-मंडल कोई ऐसा प्रस्ताव पारित करे जिसमें इस प्रकार के निदेश की सिफारिश की गई हो और यदि कोई ऐसा प्रस्ताव पारित न किया गया हो तो इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष पश्चात्, लोक अधिसूचना द्वारा ऐसे निदेश देगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-क के खण्ड (1) के अन्त में यह जोड़ दिया जाये:–

'where there is difference of opinion regarding an appointment between the Governor or Ruler of the State and the High Court, the opinion of the former shall prevail.'"

[जब कभी किसी नियुक्ति के संबंध में राज्य के राज्यपाल अथवा राजप्रमुख और उच्च न्यायालय के बीच मतभेद हो तो राज्यपाल अथवा राजप्रमुख का मत प्रभावी होगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** पंडित कुंजरू ने दो संशोधन उपस्थित किये हैं, संशोधन संख्या 132 तथा 133। प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-क के खण्ड (1) में से 'and the posting and promotion of' (तथा उनकी पद स्थापना और पदोन्नति) शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"सूची 1 (आठवां सप्ताह) के संशोधन संख्या 20 में प्रस्तावित नवीन अनुच्छेद 209-ग में 'grant of leave' (छुट्टी देने) शब्दों के पश्चात् (हिन्दी में अनुच्छेद के आरम्भ में) 'district judges in any State and' (किसी राज्य के जिला-न्यायाधीश और) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"प्रस्तावित अनुच्छेद 209क, 209ख, 209ग, 209घ तथा 209ङ संविधान के अंग बना लिये जायें।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 209क, 209ख, 209ग, 209घ तथा 209ङ संविधान के अंग बना लिये गये।

अनुच्छेद 215

***अध्यक्ष:** यह सुझाव रखा गया है कि हम आज अनुच्छेद 215 को उठायें।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2732 से लेकर संशोधन संख्या 2737 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

'अनुच्छेद 215 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जाये:

215. (1) Any territory specified in Part IV of the First Schedule and any other territory comprised within the territory of India but not specified in that Schedule shall be administered by the President in his discretion either directly or acting through a Chief Commissioner or other authority to be appointed by him.

(2) The Chief Commissioner or other authority to be appointed by the President in his discretion shall be the delegate of the President who shall have the power in his discretion to resume or modify such powers as he himself had conferred.

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

(3) The President shall have the power to take any part of the Union of India under his immediate authority and management by placing it in Part IV of the First Schedule.

(4) No Act of Parliament shall apply to any territory in Part IV of the First Schedule unless the President in his discretion by public notification so directs and the President in giving such a direction with respect to any Act may direct that the Act shall in its application to the territories in Part IV of the First Schedule or to any specified part thereof, have effect subject to such exceptions or modifications as he thinks fit.

(5) The President may in his discretion make regulations for the peace, order and good government of any such territory and any regulations so made may repeal or amend any Act of the Parliament or any existing law which is for the time being applicable to such territory and, when p romulgated by the President, shall have the same force and effect as an Act of Parliament.'"

[215. (1) प्रथम अनुसूची के भाग 4 में उल्लिखित किसी राज्य-क्षेत्र का तथा भारत राज्य-क्षेत्र में समाविष्ट, किन्तु उस अनुसूची में अनुल्लिखित, किसी अन्य राज्य-क्षेत्र का प्रशासन राष्ट्रपति स्वविवेक से या तो स्वयं करेगा या अपने द्वारा नियुक्त किये जाने वाले मुख्य आयुक्त या अन्य प्राधिकारी के द्वारा कार्य करेगा।

(2) राष्ट्रपति के द्वारा स्वविवेक से नियुक्त होने वाला मुख्य आयुक्त अथवा अन्य प्राधिकारी राष्ट्रपति का प्रतिनिधि होगा, जिसे स्वविवेक से ऐसी शक्तियों को स्वीकार करने अथवा उनमें रूप-भेद करने की शक्ति होगी जिन्हें उसने स्वयं प्रदान की हो।

(3) राष्ट्रपति को भारतीय संघ के किसी भाग को प्रथम अनुसूची के भाग 4 में रखकर अपने ही प्राधिकार तथा प्रबन्ध में ले लेने की शक्ति होगी।

(4) संसद का कोई अधिनियम प्रथम अनुसूची के भाग 4 में के किसी राज्य-क्षेत्र पर लागू नहीं होगा, जब तक कि राष्ट्रपति स्वविवेक से लोक अधिसूचना द्वारा इस प्रकार का निदेश न दे और किसी अधिनियम के संबंध में इस प्रकार का निदेश देने में यह भी निदेश दे सकता है कि जब वह अधिनियम प्रथम अनुसूची के भाग 4

में के राज्य-क्षेत्रों पर अथवा उनके किसी उल्लिखित भाग पर लागू होगा तो वह ऐसे अपवादों तथा रूपभेदों के साथ प्रभावी होगा जिन्हें वह उचित समझे।

(5) राष्ट्रपति ऐसे किसी राज्य-क्षेत्र की शान्ति, सुव्यवस्था और सुशासन के लिये स्वविवेक से विनियम बना सकेगा तथा इस प्रकार बना हुआ कोई विनियम, संसद-निर्मित किसी विधि का अथवा किसी वर्तमान विधि का जो ऐसे राज्य-क्षेत्र में तत्समय लागू है, निरसन या संशोधन कर सकेगा तथा राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित होने पर उसका उस राज्य-क्षेत्र पर लागू संसद-अधिनियम के जैसा ही बल और प्रभाव होगा।]

श्रीमान्, मैं उसे बिना कुछ व्याख्या किये हुए उपस्थित करता हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, मुझे सभा के सामने केवल एक मामला रखना है और सभा के द्वारा मैं उसे संबंधित प्राधिकारियों तक पहुंचाना चाहता हूं। यह अनुच्छेद उन क्षेत्रों के संबंध में है जिनकी गणना अनुसूची 1 के भाग 4 में की जायेगी और जो सीधे-सीधे केन्द्रीय सरकार के प्रशासन के अधीन होंगे। मैं यह चाहता हूं कि एक विशेष क्षेत्र जो इस समय संविधान के मसौदे की अनुसूची 1 के भाग 4 में सम्मिलित नहीं है उसमें सम्मिलित किया जाये। जो क्षेत्र मेरे ध्यान में है वह अस्थायी रूप से अनुसूची 5 में मद्रास के अधीन रखा गया था। सभा ने अनुसूची 5 के संबंध में जो संशोधन स्वीकार किया है उसके अनुसार यह राष्ट्रपति के लिये छोड़ दिया गया है कि वह जिन क्षेत्रों को चाहे अनुसूची 5 में सम्मिलित करे। मैं उन द्वीपों की चर्चा कर रहा हूं जो लक्केडिव द्वीप कहे जाते हैं जिनमें मिनिकाई तथा अमीनदीवी द्वीप भी हैं। यह द्वीपसमूह भारत के पश्चिम में अरब सागर में हैं। ये द्वीप अनुसूचित क्षेत्र समझे जाते हैं और इनका प्रशासन मद्रास सरकार के हाथ में है।

मैंने यह सुझाव रखा है कि इन द्वीपों का प्रशासन केन्द्र को अपने हाथ में ले लेना चाहिये। इसका अर्थ यह नहीं है कि मैं मद्रास सरकार द्वारा इन द्वीपों के प्रशासन पर आक्षेप कर रहा हूं। वास्तव में तथ्य यह है कि ये द्वीप मद्रास के तट से बहुत दूर हैं और वहां की प्रान्तीय सरकार के पास इस प्रकार के क्षेत्र के प्रशासन की देख रेख के लिये पर्याप्त साधन नहीं हैं क्योंकि उनके पास न तो कोई सामुद्रिक पोत हैं और न वहां कोई निजी वाणिज्यिक पोत है। जहां तक मुझे ज्ञात है इस समय वहां साल में एक बार एक सब-कलेक्टर एक चिकित्सा-संबंधी अधिकारी के साथ जाता है। मद्रास सरकार का इन द्वीपों के साथ केवल इतना ही सम्पर्क है। मैं इस समय इन द्वीपों के सामरिक महत्व पर जोर नहीं देना चाहता। उनका सामरिक महत्व हो या न हो किन्तु यह स्पष्ट है कि इन द्वीपों के प्रशासन को प्रान्तीय सरकार को सौंपने का विचार एक पुरातन विचार

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

था। प्रान्तीय सरकार को इनके प्रशासन की जिम्मेदारी लेने में कठिनाई हो सकती है। इसलिये इस व्यवस्था को जारी नहीं रखना चाहिये। चाहे इन द्वीपों का संघ के लिये भविष्य में कोई भी महत्व क्यों न हो, इनके प्रशासन की जिम्मेदारी को केन्द्र को उसी प्रकार स्वीकार करना चाहिये जैसे वह उन क्षेत्रों की जिम्मेदारी स्वीकार किये हुए है जो अनुच्छेद 215 के अधीन होते हैं और जिनका अनुसूची 7 के भाग 4 में उल्लेख है।

मैं आशा करता हूं कि संविधान सभा का सचिवालय इन सुझावों को संबंधित अधिकारियों के पास भेजेगा और जब हम अनुसूची 1 के भाग 4 को उठायेंगे तो संबंधित मंत्रालय के परामर्श के अनुसार यथोचित संशोधन किये जायेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मुझे कुछ नहीं कहना है।

***सरदार हुकम सिंह:** श्रीमान्, मुझे कोई संशोधन उपस्थित नहीं करना है। मुझे इस अनुच्छेद के खण्ड (2) पर एक आपत्ति है और उसकी ओर मैं मसौदा-समिति के अध्यक्ष का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। मुझे यह प्रतीत होता है कि इसकी शब्दावली से संसद की सर्व-सत्ता का अल्पीकरण होता है। मैं उनसे प्रार्थना करता हूं कि यदि सम्भव हो तो इन शब्दों को बदल दिया जाये। प्रयुक्त शब्द इस प्रकार हैं:

> "राष्ट्रपति ऐसे किसी राज्य-क्षेत्र की शान्ति और सुशासन के लिये विनियम बना सकेगा तथा इस प्रकार बना हुआ कोई विनियम, संसद्-निर्मित किसी विधि का निरसन या संशोधन कर सकेगा।"

मुझे इस उपबन्ध पर आपत्ति है कि राष्ट्रपति संसद-निर्मित किसी विधि का संशोधन कर सकेगा, यद्यपि हम यह कहते हैं कि संसद सर्वसत्ताधिकारी है। यदि हम यह कहें कि विनियम में यह उपबंधित होगा कि ऐसे राज्य-क्षेत्र में संसद-अधिनियम लागू नहीं होगा अथवा वह ऐसे राज्य-क्षेत्र में रूप-भेद के साथ लागू होगा।

मैं इसे केवल मसौदा-समिति के सभापति के ध्यान में लाना चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** सरदार हुकम सिंह ने पैरा 2 के संबंध में कुछ सुझाव रखे हैं। वे यह कहते है कि यह कहने से कि राष्ट्रपति संसद-निर्मित विधि का निरसन अथवा संशोधन करेगा, संसद के प्राधिकार का अल्पीकरण होता है और यह सुझाव रखते हैं कि शब्दावली में इस प्रकार रूप-भेद करना चाहिये कि संसद की शक्ति किसी के अधीन न होने पाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** स्थिति यही है। यह एक प्रकार का अनुकूलन है। आसाम के स्वायत्तशासी जिलों के संबंध में आसाम के राज्यपाल

को जब कभी वह इसकी आवश्यकता देखे, संसद-निर्मित विधियों का इसी प्रकार अनुकूलन करने की शक्ति प्राप्त है। कुछ विशेष प्रकार के राज्य-क्षेत्रों में संसद-निर्मित विधि पूरी की पूरी लागू नहीं की जा सकती और उसे वहां के अनुकूल बनाना होगा।

***सरदार हुकम सिंहः** श्रीमान्, क्या यह उत्तर पर्याप्त है? मेरा यह सुझाव था कि इस कथन से कि राष्ट्रपति संसद द्वारा पारित अधिनियम का निरसन करेगा, संसद की सर्व सत्ता का अल्पीकरण होता है।

***अध्यक्षः** सुझाव एक शब्द के संबंध में है, शक्ति के संबंध में नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** राष्ट्रपति संसद का ही एक अंश है। इससे कोई कठिनाई नहीं होती।

***अध्यक्षः** अब मैं श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है किः

"संशोधनों की सूची के संशोधन संख्या 2732 से लेकर संशोधन संख्या 2737 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जायेः

अनुच्छेद 215 के स्थान पर निम्नलिखित रखा जायेः

'215. (1) Any territory specified in Part IV of the First Schedule and any other territory comprised within the territory of India but not specified in that Schedule shall be administered by the President in his discretion either directly or acting through a Chief Commissioner or other authority to be appointed by him.

(2) The Chief Commissioner or other authority to be appointed by the President in his discretion shall be the deligate of the President who shall have the power in his discretion to resume or modify such powers as he himself had conferred.

(3) The President shall have the power to take any part of the Union of India under his immediate authority and management by placing it in Part IV of the First Schedule.

(4) No Act of Parliament shall apply to any territory in Part IV of the First Schedule unless the President in his discretion by public notification so

[अध्यक्ष]

directs and the President in giving such a direction with respect to any Act may direct that the Act shall in its application to the territories in Part IV of the First Schedule, or to any specified part thereof, have effect subject to such exceptions or modifications as he thinks fit.

(5) The President may in his discretion make regulations for the peace, order and good government of any such territory and any regulations so made may repeal or amend any Act of the Parliament or any existing law which is for the time being applicable to such territory and when promulgated by the President, shall have the same force and effect as an Act of Parliament.'"

[215. (1) प्रथम अनुसूची के भाग 4 में उल्लिखित किसी राज्य-क्षेत्र का तथा भारत राज्य-क्षेत्र में समाविष्ट किन्तु उस अनुसूची में अनुल्लिखित किसी अन्य राज्य-क्षेत्र का प्रशासन राष्ट्रपति स्वविवेक से या तो स्वयं करेगा या अपने द्वारा नियुक्त किये जाने वाले मुख्य आयुक्त या अन्य प्राधिकारी के द्वारा कार्य करेगा।

(2) राष्ट्रपति के द्वारा स्वविवेक से नियुक्त होने वाला मुख्य आयुक्त अथवा अन्य प्राधिकारी राष्ट्रपति का प्रतिनिधि होगा, जिसे स्वविवेक से ऐसी शक्तियों को स्वीकार करने अथवा उनमें रूप भेद करने की शक्ति होगी जिन्हें उसने स्वयं प्रदान की हों।

(3) राष्ट्रपति को भारतीय संघ के किसी भाग को प्रथम अनुसूची के भाग 4 में रखकर अपने ही प्राधिकार तथा प्रबन्ध में ले लेने की शक्ति होगी।

(4) संसद् का कोई अधिनियम प्रथम अनुसूची के भाग 4 में के किसी राज्य-क्षेत्र पर लागू नहीं होगा जब तक कि राष्ट्रपति स्वविवेक से लोक-अधिसूचना द्वारा इस प्रकार का निदेश न दे और किसी अधिनियम के संबंध में इस प्रकार का निदेश देने में यह भी निदेश दे सकता है कि जब वह अधिनियम प्रथम अनुसूची के भाग 4 में के राज्य-क्षेत्रों पर अथवा उनके किसी उल्लिखित भाग पर लागू होगा तो वह ऐसे अपवादों तथा रूपभेदों के साथ प्रभावी होगा जिन्हें वह उचित समझे।

(5) राष्ट्रपति ऐसे किसी राज्य-क्षेत्र की शन्ति, सुव्यवस्था और सुशासन के लिये स्वविवेक से विनियम बना सकेगा तथा इस प्रकार बना हुआ कोई विनियम, संसद-निर्मित किसी विधि का अथवा किसी वर्तमान विधि या, जो ऐसे राज्य-क्षेत्र में तत्समय लागू है, निरसन या संशोधन कर सकेगा तथा राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित होने पर उसका उस राज्य-क्षेत्र पर लागू संसद-अधिनियम के जैसा ही बल और प्रभाव होगा।]

संशोधन गिर गया।

***अध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 215 संविधान का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

अनुच्छेद 215 संविधान का अंग बना लिया गया।

अनुच्छेद 303

***अध्यक्षः** अनुच्छेद 303। अब हम परिभाषाओं वाला अनुच्छेद 303 उठा सकते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** अध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ग) निकाल दिया जाये।"

***अध्यक्षः** मैं अभी यह पूछने जा रहा था कि क्या हम इस अनुच्छेद पर भी उसी प्रकार विचार न करें जैसे हमने अनुसूची 7 की सूचियों पर विचार किया था और एक एक मद को उठाकर उसे पारित किया था।

मैं मदों को उसी क्रम से उठाऊंगा जिस क्रम से वे मसौदे में दी हुई हैं। संशोधनों की सूची के अंक 2 का संशोधन संख्या 3211 उपस्थित किया जा सकता है।

***श्री एच.वी. कामतः** वह एक शाब्दिक संशोधन है। मैं उसे मसौदा समिति के विचारार्थ छोड़ देता हूं।

(संशोधन संख्या 3212 और 3213 उपस्थित नहीं किये गये।)

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"खण्ड (1) का उपखण्ड (क) अनुच्छेद 203 का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उपखण्ड (ख) के संबंध में मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूं। आरम्भ में हमने संविधान में दो भाग रखने का प्रस्ताव रखा था जिनमें कुछ समुदाय अनुसूचित जातियों के रूप में परिगणित किये गये थे और कुछ समुदाय अनुसूचित आदिम-जातियों के रूप में परिगणित किये गये थे। अब हम इन दो भागों को निकालने का प्रस्ताव रख रहे हैं। हमने यह विचार किया कि इनके फलस्वरूप संविधान पर बहुत भार पड़ जायेगा और अच्छा यह होगा कि इस उद्देश्य की पूर्ति राष्ट्रपति के आदेश द्वारा की जाये। इस समय हमारा प्रस्ताव यही है। इस दशा में, मेरे विचार से, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों की परिभाषा-संबंधी खण्ड संविधान के किसी अन्य भाग में रखने होंगे और उन्हें एक अनुच्छेद में ही स्थान देना होगा जिसमें यह कहा जायेगा कि राष्ट्रपति इसकी परिभाषा करेगा कि अनुसूचित जातियां कौन हैं और अनुसूचित आदिम-जातियां कौन हैं। अनुच्छेद 296 तथा 299 के संबंध में भी जो स्थगित रखे गये हैं, यह प्रश्न उठाया गया है। सम्भव है कि उन उपबन्धों के साथ उपखण्ड (ख) और (ग) में उल्लिखित "आंग्ल-भारतीय" और "भारतीय ईसाई" शब्दों की परिभाषाओं पर भी विचार करना पड़े। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इन्हें इस समय स्थगित रखा जाये।

***श्री वी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास : जनरल): अनुसूचित जातियों आदि के संबंध में सभी उपबन्ध स्थगित रखे जायें।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि सभा इसके लिये सहमत है कि मद (ख) और (ग) पर इस समय विचार नहीं किया जाये।

[उपखण्ड (ख) और (ग) स्थगित रखे गये।]

***अध्यक्ष:** मद (घ) के संबंध में कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है कि:

"उपखण्ड (घ) स्वीकार कर लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ङ) निकाल दिया जाये।"

***अध्यक्षः** अब कोई मुख्य न्यायाधीश नहीं है। पहले अधीन उच्च न्यायालय होते थे जो मुख्य न्यायालय कहे जाते थे और उनमें मुख्य न्यायाधीश होते थे। प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) का उपखण्ड (ङ) निकाल दिया जाये।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

खण्ड 1 का उपखण्ड (ङ) अनुच्छेद 303 से निकाल दिया गया।

(संशोधन संख्या 3219 उपस्थित नहीं किया गया।)

***अध्यक्षः** अब हम मद (च) को उठाते हैं। इसके संबंध में कोई संशोधन नहीं है। प्रस्ताव यह है किः

"खण्ड (1) का उपखण्ड (च) अनुच्छेद 303 का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (छ) के स्थान पर यह उपखण्ड रखा जायेः

'(g) "corresponding Province", "corresponding Indian State" or "corresponding State" means in cases of doubt such Province, Indian State or State as may be determined by the President to be the corresponding Province, the corresponding Indian State or the corresponding State, as the case may be, for the particular purpose in question;'"

[(छ) "तत्स्थानी प्रान्त", "तत्स्थानी देशी राज्य" अथवा "तत्स्थानी राज्य" से संशयात्मक दशाओं में अभिप्रेत है ऐसा प्रान्त, देशी राज्य, या राज्य जिसे प्रश्नास्पद विशिष्ट प्रयोजन के लिये राष्ट्रपति यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त, तत्स्थानी देशी राज्य अथवा तत्स्थानी राज्य निर्धारित करे;]

इसमें हमने केवल देशी राज्यों को और सम्मिलित किया है।

***श्री एच.वी. कामतः** क्या हम अब भी "देशी राज्य" और "राज्य" के विभेद को बनाये रखना चाहते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** विभेद इस प्रकार है: अब राज्य से अभिप्रेत है संघ का एक अंग। देशी राज्य से अभिप्रेत है जो संघ के बाहर है किन्तु जिस पर संघ का प्रभुत्व अथवा नियंत्रण है।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या कच्छ का राज्य, जहां अब केन्द्र का प्रशासन है "देशी राज्य" है? क्या भूपाल भी "देशी राज्य" है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** "देशी राज्य" की परिभाषा बाद को की गई है।

***अध्यक्ष:** "देशी राज्य" की परिभाषा आगे संशोधन संख्या 140 में की गई है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यह दिखाई देता है कि सदस्यों को कुछ भ्रम हो गया है। "तत्स्थानी प्रान्त" और "तत्स्थानी देशी राज्य" पद संविधान के प्रारम्भ से पहले की अवस्था के लिये हैं। "तत्स्थानी राज्य" पद संविधान के प्रारम्भ के पश्चात् प्रयोग में आयेगा। दोनों में केवल इतना अन्तर है। मुझे आशा है कि अब इस संबंध में भ्रम नहीं होगा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (छ) के स्थान पर यह उपखण्ड रखा जाये:–

'(g) "corresponding Province", "corresponding Indian State" or "corresponding State" means in cases of doubt such Province, Indian State or State as may be determined by the President to be the corresponding Province, the corresponding Indian State or the corresponding State, as the case may be, for the particular purpose in question;'"

"[(छ)] "तत्स्थानी प्रान्त", "तत्स्थानी देशी राज्य" अथवा "तत्स्थानी राज्य" से संशयात्मक दशाओं में अभिप्रेत है ऐसा प्रान्त, देशी राज्य, या राज्य जिसे प्रश्नास्पद विशिष्ट प्रयोजन के लिये राष्ट्रपति यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त, तत्स्थानी देशी राज्य अथवा तत्स्थानी राज्य निर्धारित करे;]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"खण्ड (1) का उपखण्ड (छ) संशोधित रूप में अनुच्छेद 303 का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब हम मद (ज) को उठाते हैं। इसके संबंध में कोई संशोधन नहीं है।

प्रस्ताव यह है कि:

"खण्ड (1) का उपखण्ड (ज) अनुच्छेद 303 का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (1) में से 'but does not include any Act of Parliament of the United Kingdom or any Order in Council made under any such Act' (परन्तु जिसमें यूनाइटेड किंगडम की संसद के किसी अधिनियम का अथवा उसके अधीन बनाये हुए परिषद् स्थित आदेश का समावेश नहीं हो) शब्द निकाल दिये जायें।"

जब तक संसद अन्यथा उपबन्ध न बनाये ऐसे अधिनियमों को, जैसे वणिक नौपरिवहन अधिनियम, जारी रखना होगा।

***श्री एच.वी. कामत:** इस उपखण्ड (1) में स्पष्टत: एक बात रह गई है। इसमें विधियों तथा उपविधियों की चर्चा है। किन्तु केवल 'नियम' शब्द का उल्लेख है। 'उपनियम' शब्द भी क्यों नहीं रखा जाता?

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मेरे नाम से इस आशय का एक संशोधन है। किन्तु यदि मसौदा-समिति ने उस पर विचार किया है और इसे अनावश्यक समझा है तो मैं उसे उपस्थित नहीं करना चाहता। मैं मसौदा समिति के ध्यान में केवल यह लाना चाहता हूं कि बड़ोदा के समान कई क्षेत्र ऐसे भी हैं जो अन्य प्रान्तों में समाविष्ट कर दिये गये हैं। बड़ोदा के संबंध में "वर्तमान विधि" पदावली का क्या निर्वचन किया जायेगा? क्या उससे केवल वे विधियां अभिप्रेत होंगी जो इस समय बंबई के प्रान्त में प्रवर्तन में हैं अथवा क्या उससे वे विधियां भी अभिप्रेत होंगी जो बड़ोदा की सरकार अथवा वहां के विधान-मंडल ने समाविष्ट के पूर्व पारित किये थे? क्योंकि वर्तमान पदावली के अनुसार बड़ोदा की पहले की सरकार तथा विधान-मंडल द्वारा पारित विधियां भी सम्मिलित की जा सकती हैं, भले ही बंबई की विधियों ने उनका स्थान के लिया हो। यदि यह स्पष्ट कर दिया गया तो मैं अपना संशोधन उपस्थित नहीं करूंगा। अन्यथा, मैं यह चाहता हूं कि मसौदा-समिति मेरे संशोधन पर विचार करे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** यह कई बातों पर निर्भर रहेगा कि कोई विधि प्रवर्तन में है या नहीं। पहले तो समाविष्ट पत्र में ही इस आशय का उपबन्ध होगा कि अमुक-अमुक विधियां प्रवर्तन में नहीं रहेंगी। हो सकता है कि बंबई की सरकार बड़ोदा के समाविष्ट हो जाने के पश्चात् उस क्षेत्र की विधियों को बनाये रखे, अथवा उसकी विधियों से उनका निराकरण हो जाये। इसलिये वर्तमान विधि से अभिप्रेत है वह विधि जो संविधान के प्रारम्भ पर प्रवर्तन में हो।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** मैं अपना संशोधन उपस्थित नहीं करना चाहता।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (1) में से 'but does not include any Act of Parliament of the United Kingdom or any Order in Council made under any such Act' (परन्तु जिसमें यूनाइटेड किंगडम की संसद के किसी अधिनियम का अथवा उसके अधीन बनाये हुए परिषद् स्थित आदेश का समावेश नहीं हो) शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"खण्ड (1) का उपखण्ड (1) संशोधित रूप में अनुच्छेद 303 का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***अध्यक्ष:** अब उपखण्ड (अ) है। इसके संबंध में कोई संशोधन नहीं है प्रस्ताव यह है कि

"खण्ड (1) का उपखण्ड (अ) अनुच्छेद 303 का अंग बना लिया जाये।"

प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ञ) के बाद यह उपखण्ड प्रविष्टि किया जाये:

' 1 (jj) 'Foreign State' means any State other than India but does not include a State notified in this behalf by the President.'"

[(ञञ) 'विदेशी राज्य' से अभिप्रेत है भारत से भिन्न कोई राज्य किन्तु इसके अन्तर्गत वह राज्य नहीं आता जिसे राष्ट्रपति ने इस प्रयोजन के लिये अधिसूचित किया हो।]

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** क्या डॉ. अम्बेडकर कृपा करके बतायेंगे कि उपखण्ड (ञञ) के बाद के अंश का क्या अर्थ है? क्या वे उदाहरण दे कर इसे स्पष्ट करेंगे?

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** यदि यह अपेक्षित हुआ तो राष्ट्रपति कुछ राज्यों को विदेशी राज्यों की श्रेणी से अलग कर सकता है। यद्यपि अभी यह नहीं कहा जा सकता है किन्तु सम्भव है कि राष्ट्रमंडल के अधीन जो नई व्यवस्था की जाये वह इसी योजना के अधीन की जाये। विचार यह है कि यदि भारत की भावी सरकार किन्हीं राज्यों को विदेशी राज्यों की श्रेणी में नहीं रखना चाहे तो राष्ट्रपति को इसका प्राधिकार होगा। माननीय सदस्य महोदय को सम्भवत: ज्ञात होगा कि इंग्लिस्तान के साथ तथा भारत के साथ भी आयरलैंड का क्या संबंध है। यद्यपि इस संबंध में कोई विधि नहीं है और कोई संधि भी नहीं है किन्तु हम आयरलैंड को एक विदेशी राज्य नहीं मानते।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** श्रीमान्, जो परिभाषायें हम कर रहे हैं उनका विधि की दृष्टि से महत्व है। या तो कोई राज्य विदेशी राज्य होता है या नहीं होता है। यदि वह विदेशी राज्य नहीं है तो उस पर इस संविधान के उपबन्ध तथा इस संविधान के उपबन्धों के अधीन बनाई हुई विधियां लागू होंगी। मेरे माननीय मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी ने जो उदाहरण दिया है उसका इससे कोई संबंध नहीं है। यह कह कर कि इंग्लिस्तान विदेशी राज्य नहीं है हम उस पर इस संविधान को, अथवा इसके अधीन बनाई हुई विधियों को लागू नहीं कर सकते। विधि की परिभाषाओं के अतिरिक्त यह प्रश्न प्रथाओं का भी है। इसलिये मेरे विचार से हमें इन शब्दों की आवश्यकता नहीं है—"जिसे राष्ट्रपति ने इस प्रयोजन के लिये अधिसूचित किया हो।" हम संसद को भारत राज्य-क्षेत्र में अन्य राज्य-क्षेत्रों को समाविष्ट करने की शक्ति दे चुके हैं। राष्ट्रपति को यह अधिसूचित करने की शक्ति नहीं देनी चाहिये कि कोई ऐसा राज्य जो संसद की विधि द्वारा भारत-राज्यक्षेत्र के अन्तर्गत नहीं है भारत का भाग है। इस कथन का कि राष्ट्रपति यह अधिसूचित कर सकेगा कि कोई राज्य विदेशी राज्य नहीं है, विधि की दृष्टि से यह अर्थ है कि वह किसी देशी राज्य का भाग होगा। जब तक आप उस राज्य की परिभाषा न करें जो न तो विदेशी हो और न भारत के अन्तर्गत हो तब तक मेरे विचार से यदि कठिनाइयां नहीं तो अनेक प्रकार के भ्रम अवश्य उत्पन्न होंगे। मेरे विचार से उपखण्ड (ञञ) को रखने की आवश्यकता नहीं है। प्रथाओं के विषयों का परिभाषाओं में समावेश करना बिल्कुल ही अनावश्यक है। और हमें इसका प्रयास भी नहीं करना चाहिये। यदि हम इस उपखण्ड (ञञ) को नहीं रखेंगे तो मेरे विचार से हमारी कोई हानि नहीं होगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, स्थिति इस प्रकार है। यदि कोई इसके आशय को "भारत" शब्द तक ही सीमित रखे तो विदेशी राज्य का वही अर्थ होगा जो साधारणतया समझा जाता है। प्रत्येक राज्य अन्य राज्य के लिये एक विदेशी राज्य है। यह परिभाषा के पहले भाग से स्पष्ट हो जाता है। इसलिये परिभाषा के उस भाग पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती है। सम्भव है कि इस परिभाषा की आवश्यकता भी न हो किन्तु चूंकि संविधान के एक भाग में हमने "विदेशी राज्य" शब्द रखे हैं। और कुछ प्रयोजनों के लिये किसी तथाकथित विदेशी राज्य के संबंध में यह घोषित करने की आवश्यकता पड़ सकती है कि वह विदेशी राज्य नहीं है इसलिये इस परिभाषा को रखने की आवश्यकता है और इसकी भी आवश्यकता है कि राष्ट्रपति को यह घोषित करने की शक्ति दी जाये कि कुछ प्रयोजनों के लिये इस प्रकार का राज्य विदेशी राज्य नहीं समझा जायेगा। मेरे विचार से यह मलाया के उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है। इसलिये इसका वास्तव में यह अर्थ है कि कुछ प्रयोजनों के लिये राष्ट्रपति यह घोषित कर सकता है कि अमुक राज्य के भारत के बाहर होने के कारण विदेशी राज्य होने पर भी कुछ प्रयोजनों के लिये वह विदेशी राज्य नहीं समझा जायेगा। इसी कारण इस परिभाषा को रखा जा रहा है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** इस उपखण्ड के अधीन राष्ट्रपति को कुछ प्रयोजनों के लिये अधिसूचित करने की शक्ति प्राप्त नहीं होती। इसमें केवल परिभाषा की गई है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जब राष्ट्रपति अधिसूचना निकालेगा तो वह नि:संदेह इसे स्मरण रखेगा।

***अध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 303 के खण्ड (1) के उपखण्ड (ञ) के बाद यह उपखण्ड प्रविष्ट किया जाये:

'(jj) 'Foreign State' means any State other than India but does not include a State notified in this behalf by the President.'"

[(ञञ) 'विदेशी राज्य' से अभिप्रेत है भारत से भिन्न कोई राज्य किन्तु इसके अंतर्गत वह राज्य नहीं आता जिसे राष्ट्रपति ने इस प्रयोजन के लिये अधिसूचित किया हो।]

संशोधन स्वीकार कर लिया गया।

***कई माननीय सदस्य:** कार्यक्रम के बारे में क्या तय किया गया है?

***अध्यक्ष:** मैं सभा को यह सूचित करना चाहता हूं कि संविधान के कुछ उपबन्धों को निबटाना हैं उन्हें समाप्त करने के पश्चात् हमें एक विधेयक पर विचार

करना है जो उपस्थित किया जा चुका है। जब यह सब कार्य समाप्त हो जायेगा तो हम सभा स्थगित करेंगे। यह सभा पर निर्भर है कि वह इस कार्य को समाप्त करने में कितना समय ले। यदि आप चाहें तो मैं इन अनुच्छेदों को बता सकता हूं। अनुच्छेद संख्या 99, 184, 303, 304, 305, अनुसूची 8, अनुसूची 9, अनुच्छेद 1, नवीन अनुसूची 3-क, अनुसूची 4, नवीन अनुच्छेद 264-क। इसके अतिरिक्त संविधान के मसौदे के हिन्दी संस्करण के संबंध में एक प्रस्ताव की सूचना श्री मुंशी ने भी दी है और एक विधेयक डॉ. अम्बेडकर के नाम से भी है। इस सत्र में हमें इतना कार्य समाप्त करना है।

***पं. गोविन्द मालवीयः** श्रीमान्, क्या मैं यह जान सकता हूं कि क्या इस संबंध में निर्णय हो गया है कि सभा का अगला सत्र अक्तूबर में होगा?

***अध्यक्षः** अगला सत्र अक्तूबर में होगा।

***पं. गोविन्द मालवीयः** जब अगला सत्र शीघ्र ही होने जा रहा है तो क्या हम इस कार्य को तब तक के लिये स्थगित नहीं रख सकते?

***अध्यक्षः** मैंने यह देखा है कि जब यह सत्र समाप्त होने को आया है तो सदस्यों की यह प्रवृत्ति हो गई है कि सब कुछ अगले सत्र के लिये स्थगित किया जाये। कल तक मैं यह समझता था कि हम सभी अन्तर्कालीन उपबन्धों को निबटा सकेंगे। किन्तु मुझे यह सूचित किया गया है कि हम उन्हें नहीं उठा सकेंगे ओर हमें उन्हें अगले सत्र के लिये स्थगित रखना होगा। आज मुझसे यह कहा गया कि हम प्रस्तावना को नहीं समाप्त कर सकते और हमें उसे स्थगित रखना होगा। अब आप यह प्रस्ताव करते हैं कि अवशिष्ट कार्य भी स्थगित रखना चाहिये। यह सम्भव नहीं हो सकेगा क्योंकि.....

***पं. गोविन्द मालवीयः** श्रीमान्, मैं यह इस कारण कह रहा हूं। आरम्भ में यह विचार किया गया था कि यह सत्र थोड़े समय तक, अर्थात् लगभग पन्द्रह दिन तक रहेगा। इस सभा को समवेत हुए लगभग सात सप्ताह हो गये हैं। यदि यह सभा फिर अक्तूबर में समवेत होने जा रही है तो इन मदों को तब तक के लिये स्थगित करने से अधिक अन्तर नहीं पड़ेगा। किन्तु यदि आपका यह विचार हो कि आपने जो कार्य बताया है उसमें से कुछ को हमें समाप्त कर देना चाहिये, तो श्रीमान्, मेरा यह सुझाव है कि हम आज और कल प्रातः और सायं दोनों समय अधिवेशन करें और जितना भी कार्य हो सके समाप्त करें और उसके बाद सभा स्थगित कर दें।

***कई माननीय सदस्यः** जी हां, जी हां।

***अध्यक्षः** कठिनाई यह है कि हमें कुछ छुट्टियों पर भी विचार करना है इसके अतिरिक्त विधान-सभा नवम्बर में समवेत होने जा रही है और हमें उसकी सुविधा का भी विचार करना है। हमें दूसरे पठन में संविधान के अवशिष्ट अनुच्छेदों को भी पारित करना है और फिर तीसरे पठन में सारे संविधान को समाप्त करना हैं। दूसरे पठन और तीसरे पठन के बीच में मसौदा समिति को अवश्य ही कुछ

[अध्यक्ष]

समय की अर्थात् कम से कम लगभग तीन सप्ताह की आवश्यकता होगी। ताकि वह सारी सामग्री को सुव्यवस्थित रूप में रख सके और उसे तीसरे पठन के लिये तैयार कर सके। यह सब कठिनाइयां इसलिये उठ खड़ी होती हैं क्योंकि हमारे सामने एक काल सीमा है और हमें सारे कार्य का जहां तक हो सके उसे दृष्टि में रखकर निश्चित करना है। इसलिये मैं इस सत्र में ही जितना काम हो सके समाप्त करने का प्रयास कर रहा हूं ताकि अक्तूबर के सत्र में हमारे लिये केवल आवश्यक कार्य ही रह जाये। इस समय अक्तूबर के सत्र के लिये जो कार्य निश्चित किया गया है वह यह है। राज्यों के संबंध में, अर्थात् देशी राज्यों की समाविष्टि आदि के संबंध में, एक अध्याय है। जिसे हमने अभी नहीं निबटाया इसलिये एक नवीन अध्याय को अर्थात् संविधान के मसौदे में प्रस्तावित कुछ अनुच्छेदों के संबंध में संशोधनों पर विचार करना है। इसमें मेरे विचार से कुछ समय लगेगा। इसके पश्चात् हमें अन्तर्कालीन उपबन्धों को उठाना होगा जिन पर आज विचार नहीं किया जा सका है। क्योंकि मेरे विचार से इस संबंध में कुछ कठिनाई है। अल्पसंख्यकों के संबंध में दो अनुच्छेद हैं, अर्थात् अनुच्छेद 296 और 299, जिन्हें हमने स्थगित किया है। इसके अतिरिक्त राज्य-क्षेत्रों के संबंध में अनुसूची 1 है। सम्भव है उसके संबंध में कोई कठिनाई न हो। इसके अतिरिक्त वेतन और उपलब्धियों के संबंध में अनुसूची 2 है। मैं अभी कह नहीं सकता किन्तु सम्भव है कि उसके संबंध में कुछ संशोधन उपस्थित किये जायें। इसमें कुछ समय लगेगा। अनुसूची 3-ख भी है। जिसमें राज्य-परिषद् के निर्वाचन-क्षेत्रों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त दो सारवान अनुच्छेद हैं, अर्थात् अनुच्छेद 283-क, जो सेवाओं के रक्षण के संबंध में है और जिसे स्थगित रखा गया है, और अनुच्छेद 280-क, जो आर्थिक आपात के संबंध में है। इनके अतिरिक्त दो बहुत कुछ रस्मी अनुच्छेद हैं जो प्रारम्भ और निरसन के संबंध में हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** इन पर एक सप्ताह या दस दिन से अधिक समय नहीं लगेगा।

***अध्यक्ष:** मैं इनके लिये दस दिन से अधिक समय नहीं रख रहा हूं। यदि हम 10 तारीख को कार्य आरम्भ करेंगे तो हम 20 तारीख तक उसे समाप्त कर सकते हैं। 21 तारीख से दिवाली आरम्भ होती है। दिवाली का सत्र समाप्त होने के पूर्व ही हमें यह कार्य समाप्त कर देना चाहिये। यदि हमें दस दिन तक बैठना होगा तो हमें 6 तारीख या इसके लगभग किसी तारीख को कार्य आरम्भ करना होगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** क्या हम आज अपराह्न में तथा कल बैठ कर जितना काम हो सके उसे समाप्त नहीं कर सकते हैं?

***अध्यक्ष:** मुझे बताया गया है कि कुछ अनुच्छेदों का मसौदा अभी अन्तिम रूप से निश्चित नहीं हुआ है।

***पं. ठाकुरदास भार्गव:** कल सभा की दो बैठक हो सकती हैं।

***अध्यक्षः** कल सभा की दो बैठकें होंगी।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** और एक बैठक रविवार को भी हो सकती है।

***अध्यक्षः** मुझे कोई आपत्ति नहीं है: यदि माननीय सदस्य सहमत हों तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। अथवा एक बैठक सोमवार को हो सकती है जैसी आपकी इच्छा है

***श्री वी.टी. कृष्णमाचारीः** मेरा यह सुझाव है कि हम रविवार को बैठें और रविवार को ही कार्य समाप्त कर दें।

***अध्यक्षः** मुझे कोई आपत्ति नहीं है। क्या सभा की यह इच्छा है कि सोमवार को एक बैठक हो?

***कई माननीय सदस्यः** जी हां।

अध्यक्षः हम रविवार को बैठेंगे।

***श्री आर.के. सिधवाः** क्या यह शर्त है कि हम सब कार्य रविवार को ही समाप्त कर दें अथवा क्या अवशिष्ट कार्य आगे चल कर किया जायेगा?

***अध्यक्षः** यह शर्त मैं नहीं पूरी कर सकता। यह आप को पूरी करनी होगी। सभा कल नौ बजे तक के लिये स्थगित होती है।

इसके पश्चात् सभा शनिवार तारीख 17 सितम्बर, 1949 के नौ बजे तक के लिये स्थगित हो गई।